
9 999999 003076

॥ श्री ॥

चमकती

मंगलमय नित्य स्मरण

[प्रथम भाग]

रचयिता -

पूज्य श्री घासीलालजी महाराज

— ❀ —

संग्रहकर्ता

जगत् गुरु तपस्वी श्री चान्द मुनिजी महाराज

— 卐 —

प्रथमावृति ७००० | मूल्य २) | वीर सम्वत् २४८८

प्रकाशक:—

इन्द्रमल मांगीलाल बडाला
सिन्दु (राजस्थान)

मांगीलाल भंवरलाल तलेसरा
गडवाड़ा (राजस्थान)

—:●:—

पुस्तक मिलने का पता:—

कन्हैयालाल कस्तुरचन्द बम्ब
प्रीतम नगर, वाया रतलाम (म. प्र.)

रतनलाल वीरवाल जैन
पलाना कलाँ (राजस्थान)

—:●:—

मुद्रक:—

शाह अर्जुनलाल सोनी
श्री हिन्द कानून प्रि० प्रेस, कांकरोली (राज०)

दो-शब्द

आज का मानव भौतिक वाद की अन्धा-धुन्धी मे सतप्त एव पीडित हो रहा है अर्थवाद ने मानव समाज पर इतना साम्राज्य जमा लिया है कि वह आध्यात्मिक प्रवृति से दूर होता जा रहा है यही कारण है कि मानव शक्ति सम्पन्न होते हुए भी अपने आप को अधीर ही पाता है और विचारो के साथ दु खी सा बन जाता है।

इस परिस्थिति मे मानव की दृढता एव मानसिक एकाग्रता का साधन होना अत्या-वश्यक है पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी म सा ने मानव समाज के दुख निमुक्ति निमित्त अद्भुत नव स्मरण की सस्कृत मे रचना की

जो पहलें हिन्दी व गुजराती अर्थ में प्रकाशित हुई है पूज्य श्री के प्रशिष्य जगत् गुरू तपस्वी श्री चान्द मुनिजी म. सा. ने कुछ नई रचना ओं का और संग्रह कर इसके साथ जोड़कर इस नव स्मरण को ओर भी प्रेरक कर दिया है जिसको प्रकाशक ने जन हितार्थ हिन्दी अर्थ में "चमकती मंगलमय नित्य स्मरण" के नाम से प्रकाशित कर आपके सम्मुख प्रस्तुत किया है आशा है जन मानस इसका पाठ कर अपने दुखों से अवश्य विमुक्त होंगे। शुभम् !

भवदीय--

भंवरलाल जैन

नोट-पृष्ठ ६४ 'पंक्ति १ में द्रभाव की जगह प्रभाव पढ़ें।

अर्थ सहायता दाताओं की सूचि

श्रीमान्	ताराचन्दजी सा गडवाड़ा	रू० ११।)
,,	गोरीदासजी च० भवरलालजी बोहरा	१२।)
,,	भवरलाल जी बोहरा	२५।)
,,	स्व० नाथूलालजी बो की धर्म पत्नी	६।)
,,	,, भेरूलालजी तलेसरा की धर्मपत्नी नोजीबाई एव पुत्र श्रीमांगीलालजी	११२।)
,,	छगनलालजी सा सींगवी की धर्मपत्नी हमेर बाई	१४)
,,	माधुलाल जी सा की धर्म पत्नी कन्चनबाई	६)
,,	स्व रतनलालजी लोढा की धर्म पत्नी	८)
,,	नारायणजी चारण की धमपत्नी जीजीबाइ	६)
,,	रखबदास जी सा	८)
,,	मगनलाल जी सा बोहरा	१०)
,,	नाथूलाल जी कल्लारा	६)

पुस्तके भेंट दाताओं की सूचि आखीर मे पढें।

विषयानुक्रमणिका

॥ श्री ॥

चमत्कारी मङ्गलमय नित्य स्मरण

— 卐 —

नवस्मरण स्तोत्र

मङ्गल वन्दन—

वर्धमानं जिन नत्वा,
नत्वा गौतमनायकम् ।
घासीलालेन मुनिना,
नवस्मरणमुच्यते ॥१॥

जिनेश्वर श्री वर्धमान भगवान को, और गण नायक श्री गौतम स्वामी को नमस्कार करके श्री घासीलालेन मुनि " नवस्मरण " कहते हैं ॥ १ ॥

नव-नव-मङ्गल-जनकं,
नव-नव-संमोद-सन्दोहम् ।
नवनिधि-विधाननिपुणं,
क्रियते शुभदं नवस्मरणम् ॥२॥

यह नवस्मरण, नवीन नवीन मङ्गल का जनक है, नवीन नवीन आनन्दराशि का दाता है, नवनिधियों के उत्पादन की अपूर्व शक्ति से युक्त है ऐसे अपूर्व प्रभावयुक्त, शुभदायक इस "नवस्मरण स्तोत्र" की रचना करते हैं ॥२॥

नमो-भक्त-सुखं संपद,
ऋद्धिः सिद्धिर्जयस्तथा ।

॥ श्री ॥

अद्भुतनवस्मरणस्तोत्र

—:卐:—

वर्धमान जिन नत्वा,
नत्वा गौतमनायकम् ।
चाद मुनिना,
नवस्मरणमुच्यते ॥ १ ॥

मङ्गलाचरण—

जिनेश्वर श्री वर्धमान भगवान को और गण नायक श्री गौतम स्वामी को नमस्कार करके श्री चाद मुनि ' नवस्मरण कहते हैं ॥ १ ॥

नव-नव-मङ्गल-जनकं,
नव-नव-संमोद-सन्दोहम् ।
नवनिधि-विधाननिपुणं,
क्रियते शुभदं नवस्मरणम् ॥ २ ॥

यह नवस्मरण, नवीन नवीन मङ्गल का जनक है, नवीन नवीन आनन्दराशि का दाता है, नवनिधियों के उत्पादन की अपूर्व शक्ति से युक्त है ऐसे अपूर्व प्रभावयुक्त, शुभदायक इस "नवस्मरण स्तोत्र" की रचना करते हैं ॥ २ ॥

नमो-भक्त-सुखं संपद्,
ऋद्धिः सिद्धिर्जयस्तथा ।

विजयश्चापि शान्तिश्च,
नवस्मरणमीरितम् ॥ ३ ॥

इस "नवस्मरण" में (१) नमस्काररूप मङ्गलस्मरण, (२) भक्तामररूप आनन्दस्मरण, (३) सुखस्मरण, (४) उपत्स्मरण, (५) ऋद्धि स्मरण, (६) सिद्धिस्मरण (७) जयस्मरण, (८) विजयस्मरण और (९) शातिस्मरण, इस प्रकार नौ स्मरण हैं।

सर्वमैत्रीकरं स्तोत्रं, सर्वथाशान्तिकारकं ।
सर्वदुःखहरं चैव, सर्वकल्याणकारकम् ४

सभी के साथ मैत्री स्थापित करने में सहायक, सभी प्रकार से शांति देने वाले, सभी प्रकार के दुःखों को हरने वाले और सभी का कल्याण करने वाले ये नव स्मरण हैं ॥ ४ ॥

कासः श्वासो ज्वरो दाहः,
कुक्षिशूलं भगन्दरम् ।
अर्शोऽजीर्ण-दृष्टिशूलं,
मूर्धशूलमरोचकः ॥५॥
अक्षिशूलं कर्णशूलं,
कण्ठरोगोजलोदरम् ।

कुष्ठ च व्याधयः सर्वे,
विनश्यन्ति न संशयः ॥६॥

इन नव स्मरणों से (१) खांसी, (२) दमा, (३) ज्वर (४) दाह-ज्वर, (५) पेट का दर्द, (६) बवासीर, (७) अजीर्ण, (८) कुक्षिशूल, (९) भगन्दर, (१०) मस्तकशूल, (११) अरुचि, (१२) आंख का दर्द, (१३) कान का दर्द, (१४) कण्ठमाला, (१५) जलोदर और (१६) कुष्ठ आदि समस्त व्याधियां नष्ट होजाती हैं, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं है ॥ ५-६॥

एतत्प्रभावात् सिंहाद्या,
दस्यवो वैरिणस्तथा ।
दूरादेव पलायन्ते,
नवस्मरणधारिणाम् ॥ ७ ॥

घोरासु सर्वबाधासु, वेदनासु तथैव च।
एतस्य पठनादेव, सद्यो मुच्येत संकटात्८

इनके प्रभाव से सिंह आदि भयंकर प्राणी, चोर-डाकू तथा शत्रु लोग दूर से ही भाग जाते हैं। नवस्मरण धारियों का ये अणु-मात्र भी अपकार नहीं कर सकते। सभी प्रकार के भयंकर दुःखों में, सभी प्रकार की वेदनाओं में नवस्मरण के पाठ मात्र से ही मनुष्य, उनसे तत्काल मुक्त हो जाते हैं ॥ ७-८ ॥

पिशाचाद्युपसर्गाश्च,
ग्रहपीडाश्च दारुणाः।
पाठश्रवणमात्रेण,
विनश्यन्ति नृणां ध्रुवम् ॥ ६ ॥

भूत-पिशाच आदि का उपसर्ग और भयङ्कर ग्रहपीडा, इस नवस्मरण के पाठ के श्रवण मात्र से अवश्यमेव नष्ट हो जाती है ॥ ६ ॥

कायिक वाचिक पाप,

मानस चापि दुष्कृतम् ।

दुष्कृतोत्था विपत्तिश्च,

क्षय यान्ति न संशय॰ ॥ १० ॥

मानसिक, वाचिक और कायिक पाप तथा पापजनित विपत्तियां, इसके पाठ करने से तथा श्रवण मात्र से निस्सन्देह नष्ट हो जाती है ॥ १० ॥

युद्धेषु विजयप्राप्तिः,
कानन नन्दनं वनम् ।
दुःस्वप्नश्चापि सुस्वप्नो,
भवत्यस्य प्रभावतः ॥ ११ ॥

इस नवस्मरण के प्रभाव से युद्ध में विजय प्राप्त होता है, भयङ्कर वन भी नन्दनवन हो जाता है और दुःस्वप्न भी सुस्वप्न हो जाता है ॥ ११ ॥

राजद्वारे तथा युद्धे,
सभायां शत्रुसंकटे ।
उत्पाते च विवादे च,
विजयं लभते ध्रुवम् ॥ १२ ॥

राजद्वार में, युद्ध में, सभा में, शत्रुजनित विपत्तियों में, ग्रहादिजनित उत्पात में और विवाद में, इस नव स्मरण के प्रभाव से, मनुष्यों को अवश्यमेव विजय प्राप्त होता है ॥१२॥

कान्तारे च महारण्ये,
प्रान्तरे दवसकुले ।
स्थितश्च शत्रुभिश्चैव,
गृहीतस्तस्करैस्तथा ॥ १३ ॥

दवाग्नि से प्रज्वलित वन, अटवी और प्रान्तर [दूर तक शून्य मार्ग] में भी इसके स्मरण मात्र से रक्षा होती है, शत्रुओं और चोरों के उपद्रव से मनुष्य इसके स्मरण मात्र से मुक्त हो जाते हैं ॥१३॥

वृश्चिकैर्भुजगैश्चैव,
सूकरैः क्रोष्टुभिस्तथा ।
सिंहव्याघ्रैः समाक्रान्तो,
वने वाऽरण्यहस्तिभिः ॥१४॥

वन में वृश्चिक (विच्छू) सर्प, शूकर, शृगाल, सिंह, व्याघ्र और जङ्गली हाथी जिनका पीछा कर रहे हैं ऐसे मनुष्य, उन हिंसक प्राणियों के सङ्कट से इसके स्मरण मात्र से मुक्त हो जाते हैं ॥ १४ ॥

आघूर्णितो महावातैः,
स्थितः पोते महार्णवे ।

राजाऽऽज्ञप्तो वधस्थानं,
नीतः कारागृहेऽपि वा ॥१५॥

महासमुद्र में जो जहाज पर बैठे हुए हैं, और जिनका वह जहाज भयङ्कर आंधी से डूब रहा है ऐसे मनुष्य इसके स्मरण से उस आपत्ति से छूट जाते हैं। तथा जो राजा की आज्ञा से वध-स्थान में लाये गये हैं, जो जेल में रक्खे गये हैं, वहां भी इसके स्मरण से रक्षा होती है ॥ १५ ॥

पतत्सु चापि शस्त्रेषु,
संग्रामे दारुणे तथा।
अस्य स्मरणमात्रेण,
संकटान्मुच्यते नरः ॥ १६ ॥

तथा संग्राम में भयङ्कर शस्त्र वर्षा के बीच में रहे हुए मनुष्य भी इसके स्मरण मात्र से, उस सङ्कट से मुक्त हो जाते हैं ॥ १६ ॥

अशेषानुपसर्गांश्च,
महामारीकृतानपि।
रोगातङ्कभयं चैव,
समस्तं शमयेद् द्रुतम् ॥१७॥

शत्रुओं और ग्रहों से जनित समस्त उपसर्गों को, और महामारीकृत उपसर्गों को, एवं रोग और आतङ्क से उत्पन्न समस्त भयों को यह स्तोत्र शीघ्र ही शान्त कर देता है ॥ १७ ॥

उन्मादश्चित्तविक्षेपो,
मूर्च्छाऽपस्मार एव च ।
सद्यश्चैते निवर्तन्ते,
सर्वं स्मरणमात्रतः ॥१८॥

उन्माद, चित्तविक्षेप, मूर्च्छा, अपस्मार, (मिर्गी) ये सभी रोग इसके स्मरण मात्र से तत्काल ही निवृत्त हो जाते हैं ॥ १८ ॥

सर्वं पापप्रशमनं,
सर्वसिद्धिविधायकम् ।
य इदं कीर्तयेत् स्तोत्रं,
स सुखी सर्वदा भवेत् ॥१९॥

सभी पापों को दूर करने वाले, सभी प्रकार की सिद्धियों को देने वाले इस स्तोत्र का जो पाठ करता है वह सर्वदा सुखी होता है ॥ १६ ॥

अभीष्टं प्राप्नुयात् सर्वं,
धनार्थी धनसंपदम् ।
अस्य प्रभावात् प्राप्नोति,
सुखं चात्र परत्र च ॥ २० ॥

इस स्तोत्र को पढ़ने वाला अपने सभी अभीष्टों (अभिलषित वस्तुओं) को प्राप्त करता है धनार्थी धन पाता है। अधिक क्या कहा जाय, इसके प्रभाव से मनुष्य इस लोक और परलोक में सुख पाता है ॥ २० ॥

यद्‌गृहे लिखितं स्तोत्र,
भय तस्य न जायते ।
तत्रैव सकला सपत्,
स्थिरा भवति सर्वदा ॥ २१ ॥

जिसके घर मे हस्तलिखित यह स्तोत्र रहता है उसे भय नहीं होता है, और उस घर में सभी प्रकार की सम्पत्तियां सर्वदा स्थिर रहती हैं ॥ २१ ॥

मोक्षप्रदं मुमुक्षूणां,
दरिद्राणां निधिप्रदम् ।
स्तोत्रमेतद् व्याधिहरं,
ग्रहाणां शान्तिकारकम् ॥ २२ ॥

यह स्तोत्र मोक्षाभिलाषियों को मोक्ष देता है, दरिद्रों को निधि देता है, व्याधियों को दूर करता है और अशुभ ग्रहों को शान्त करता है ॥ २२ ॥

भेदे राज्ञः प्रजानां च,
दम्पत्योः प्रीतिभेदने ।
गुरौ शिष्ये च संघेषु,
मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥ २३ ॥

यह स्तोत्र राजा और प्रजा के बीच के मतभेद को, दम्पति के प्रीतिभेद को, गुरु शिष्य के वैमनस्य को दूर करता है और सङ्घ में अटूट मैत्रीभाव स्थापित करता है ॥ २३ ॥

मानोन्नतिर्भवेल्लोके,
यशसा परिवर्धते ।
आधिपत्यं च लभते,
सर्वदा स्तोत्रपाठकः ॥२४॥

इस स्तोत्र का नित्य पाठ करने वाला सर्वत्र सम्मान पाता है, और उसके यश की ख्याति होती है, वह उत्तम आधिपत्य को प्राप्त करता है ॥ २४ ॥

एतत्प्रभावाद् भव्यानां,
सर्वसौख्यपरम्परा ।
तथा तिष्ठति मेदिन्यां,
पुत्रपौत्रादिसन्ततिः ॥ २५ ॥

इस स्तोत्र के प्रभाव से भव्यों को सौख्य परम्परा प्राप्त होती है, तथा इस स्तोत्र के के पढ़ने वाले भव्यों की पुत्र-पौत्रादि सन्तति परम्परा सुख से रहती है ॥ २५ ॥

इहलोके सुखं सिद्धिं,
मङ्गलं सर्वसंपदः ।
प्राप्य जीवः परभवे,
मोक्षं वा स्वर्गमाप्नुयात् ॥ २६ ॥

इसके स्मरण से जीव इस लोक में सुख सिद्धि, मङ्गल और सभी सम्पदाओं को प्राप्त कर परभव में मोक्ष अथवा देवलोक पाता है ॥ २६ ॥

॥ इति नवस्मरणमाहात्म्य ॥

१ – नमस्काररूप प्रथम मङ्गलस्मरण

(१) नमो अरिहंताणं, (२) नमो सिद्धाणं, (३) नमो आयरियाणं, (४) नमो उवज्झायाणं, (५) नमो लोए सव्वसाहूणं।

१ श्री अरिहन्त भगवान को नमस्कार हो। २ श्री सिद्ध भगवान को नमस्कार हो। ३ आचार्य को नमस्कार हो। ४ उपाध्याय को नमस्कार हो। ५ लोक में वर्तमान सर्व साधु-मुनिराज को नमस्कार हो।

एसो पंचनमुक्कारो,
सव्वपावप्पणासणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं,

पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥

यह पंच नमस्कार सभी पापों का नाशक है, और सभी मङ्गलों में प्रधान मङ्गल है ॥१॥

चारित्रेषु यथाख्यातं, जयेषुकर्मणां जयः

परमेष्ठिनमस्कारस्तथा मंत्रेषु विद्यते ॥१॥

जैसे चारित्रों में यथाख्यात चारित्र और जयों में कर्मजय मुख्य हैं, वैसे ही मन्त्रों में पंच परमेष्ठिनमस्कार मन्त्र मुख्य है ॥१॥

गोत्रेषु तीर्थंकृद्गोत्रं,

यथा गन्धेषु चन्दनम् ।

परमेष्ठिनमस्कार,
स्तथा मंत्रेपु विद्यते ॥ २ ॥

जैसे गोत्रों में तीर्थङ्कर गोत्र श्रेष्ठ है गन्धों में चन्दन श्रेष्ठ है, वैसे ही मन्त्रों में, पंचपरमेष्ठि-नमस्कार श्रेष्ठ है ॥ २ ॥

एव पञ्चनमस्कारः,
सर्वपापप्रणाशनः ।
एतादृशो जगत्यस्मिन्,
मन्त्र कोऽपि न विद्यते ॥ ३ ॥

यह पंच नमस्कार सभी पापों का विनाशक है । इस जगत में इसके समान दूसरा कोई मन्त्र नहीं है ॥ ३ ॥

यशःकीर्तिं बलं लक्ष्मीं,
त्रिविधं च महोत्सवम् ।
नवं नवं प्रमोदं च,
लभते नात्र संशयः ॥ ४ ॥

इस मन्त्र को जपने वाले भक्तों को यश, कीर्ति, बल, लक्ष्मी, अनेक प्रकार के महोत्सव और नवीन २ आनन्द निस्सन्देह प्राप्त होते हैं ॥४॥

नवलक्षजपादस्य,
षट्षष्टिलक्षयोनिकाः ।
क्षपयेन्मानवः शुद्ध,
स्ततो याति परां गतिम् ॥ ५ ॥

इस नमस्कार मन्त्र के नौ लाख जाप जपने से मनुष्य चौरासी लाख योनियों को खपा कर शुद्ध हो जाता है, और परम गति को प्राप्त करता है ॥ ५ ॥

अष्टकोटिसहस्राणि,
सहस्राष्टकमेव च ।
अष्टोत्तरं चाष्टशत,
जपित्वा तीर्थंकृद् भवेत ॥ ६ ॥

आठ करोड़, आठ लाख, आठ हजार, आठ सौ आठ (८८८८८८८८) बार जप करके मनुष्य तीर्थंकर गोत्र बांधता है ॥ ६ ॥

एनं संस्मृत्य भावेन,
यत्र यत्रैव गच्छति।
तत्र तत्र भवेत् सिद्धिः,
सर्वाभीष्ट पदार्थगा ॥ ७ ॥

इस नमस्कार मन्त्र को भावपूर्वक स्मरण करके मनुष्य, जहां २ जाता है वहा २ उसके सभी अभिलषित वस्तुओं की सिद्धि होती है ॥७॥

॥इति नमस्कार रूप मङ्गल स्मरण ॥



२—श्री वर्द्धमानभक्तामरस्तोत्रम्

आनन्द म्मरगा—

भक्तामरप्रवर—मौलि— मरिग—व्रजेषु,
ज्योति-प्रभूत-सलिलेपु सरोवरेषु।
चेतोलि- मजु—विकसत्कमलायमान,
श्री-वर्द्धमान—चरण शरण व्रजामि॥ १

भक्ति के उत्कृष्ट भाव से नमस्कार करने के लिए झुके हुए देवों के मस्तकों के मुकुटों में जडे हुए मणियों के समूहरूपी सरोवर है, उन मणिरूपी सरोवरों में मणियों की ज्योतिरूप जल भरा हुआ है। उनमें प्रभु के चरण पच वर्ण कमलवन के समान शोभित हो रहे हैं और वे भव्य जीवों के मनरूपी भ्रमरों का

आकृष्ट कर रहे हैं, ऐसे श्री महावीर स्वामी के चरणों का शरण लेता हूँ ॥१॥

आनन्द-नंदन-वनं सवनं सुखानां,
सद्भावनं शिव-पदस्य परं निदानम्।
संसार-पार-करणं करणं गुणानां,
नाथ ! त्वदीय-चरणं शरणं प्रपद्ये ॥२

हे नाथ ! आपके चरण, आनन्द के नन्दनवन हैं, सद्भाव उत्पन्न करने वाले और मोक्षपद देने वाले हैं, संसार सागर से पार उतारने वाले हैं और समग्ज्ञानादि अनेक गुणों के भंडार हैं। हे नाथ ! आपके शरणागत-वत्सल इन चरणों का शरण मै लेता हूं ॥२॥

सिद्धौषधं सकल-सिद्ध-पदं समृद्धम्,
शुद्धं विशुद्ध-सुखदं च गुणैःसमिद्धम्।

ज्ञानप्रदं शरणदं विगताऽघवृन्दं,
ध्यानास्पदं शिवपदं शिवदं प्रणौमि ॥३॥

हे प्रभु! आपके चरण, कर्मरूपी रोग के लिए सिद्ध औषध हैं, शुद्ध हैं अव्याबाध आत्मिक सुखादि को देने वाले हैं, शुभ लक्षण रूप गुणों से उज्ज्वल हैं, ज्ञान एवं अभय के दायक और विघ्नों के दूर करने वाले हैं, ऐसे ध्यान के आधारभूत कल्याणप्रद आपके मङ्गल-मय चरणों को मैं बारम्बार नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

बालो विवेक विकलो निज-बाल-भावा-
दाकाश-मान-मपि कर्तुमिव प्रवृत्तः ।
ज्ञानाऽनन्त-गुण वर्णन कर्तु-काम
काम भवामि करुणाकर! ते पुमान्न ॥४

जैसे विवेकज्ञान से रहित बालक अपने बाल भाव के कारण कूदता हुआ आकाश को भी मापने के लिए तैयार हो जाता है, उसी प्रकार हे प्रभु ! आपके आगे आपके ज्ञानादि अनन्त गुणों के गान करने के लिए मै तत्पर हुआ हूँ। हे करुणाकर ! मेरी इस धृष्टता को आप क्षमा करना ॥ ४ ॥

स्पर्शो मणिर्नयति चेन्निज-संनिधानात्-
लोहं हिरण्य-पदवी-मिति नात्र चित्रम्,
किन्तु त्वदीय-मनुचिन्तन-मेव दूरात्,
साम्यं तनोति तवसिद्धिपदे स्थितस्य ॥५

पारसमणि तो अपने स्पर्श से लोहे को सोना बनाता है परन्तु उस लोहे को पारस-मणि नहीं बना सकता, परन्तु हे प्रभु ! आप

जो बहुत दूर (मोक्ष में) होते हुए भी आपके ध्यान मात्र से जीव आपके समान हो जाता है यह अवश्य आश्चर्य है ॥ ५ ॥

कुन्देन्दु-हार-रमणीय-गुणान् जिनेन्द्र !,
वक्तुं न पारयति कोपि कदापि लोके
कः स्यात् समस्त भुवन स्थित-जीव राशे,
रेकैक-जीवगणनाकरणे समर्थः ? ॥६॥

हे प्रभु ! जैसे समस्त लोक के अनन्त जीव राशि की, एक एक जीव करके गणना करने में कोई समर्थ नहीं है, उसी प्रकार आपके कुन्द पुष्प के समान उज्जवल, चन्द्र के समान निर्मल, और मोतियों के हार के समान स्वच्छ गुणों के वर्णन करने में कोई भी समर्थ नहीं है ॥ ६ ॥

शक्त्या विनापि मुनिनाथ ! भवद्‌गुणानां
गाने समुद्यत-मतिर्नहि लज्जितोऽस्मि ।
मार्गेण येन गरुडस्य गतिः प्रसिद्धा,
तेनैव किं न विहगस्य शिशुः प्रयाति ? ॥७

हे मुनिनाथ ! आपके गुणों के वर्णन करने में मैं समर्थ नहीं हूँ, तो भी इसके लिए उद्यत होरहा हूँ, इसमें मुझे लज्जा नहीं है क्योंकि जिस मार्ग से पक्षिराज गरुड़ उड़ता है उस मार्ग से क्या पक्षी का बच्चा नहीं उड़ता ? अर्थात् उसी मार्ग से उड़ता है ॥ ७ ॥

त्वद्वाक्सुधासुरुचिरेव विभो ! बलान्मां,
वक्तुं प्रवर्त्तयति नाथ ! भवद्‌गुणानाम् ।

यद्वर्त्ते जलनिधिस्त्तरलैस्तरङ्गै-,
स्तत्रास्ति चन्द्रकिरणादय एव हेतु ॥८॥

जैसे पूर्णिमा के दिन उगते हुए चन्द्रमा की किरणों के प्रभाव से समुद्र की चचल तरगें उछलने लगती है, उसी प्रकार, हे प्रभु ! आपकी अमृतमयी वाणी, आपके ज्ञानादि गुणों के वर्णन करने के लिए मुझे, बलपूर्वक प्रेरित करती है ॥ ८ ॥

अज्ञान-मोह-निकर भगवन् ! हृदिस्थ,
हन्तुं प्रभु प्रवचन भवदीयमेव ।
गाढं स्थिर चिरतर निमिर दरीस्थ,
हन्तुं प्रभु सुरुचिरा रुचिरेव नान्यत् ॥९॥

जैसे बहुत काल से गुफा में स्थित अन्धकार को दूर करने के लिए मणि के प्रकाश के अतिरिक्त कोई दूसरा साधन नहीं है, उसी प्रकार हे भगवन ! अनादिकाल से हृदय में स्थित अज्ञान और मोह के समूहरूप आवरण जनित गाढ़ अन्धकार को दूर करने में आपके प्रवचनरूपी प्रकाश ही एक समर्थ है ॥६॥

वाक्यं प्रमाण-नय रीति-गुणै-विहीनं,
निर्भूषणं यदपि बोधिद ! मामकीनम् ।
स्यादेव देव-नर-लोक-हिताय युष्मत्-
संगाद् यथा भवति शुक्ति-गतोद बिंदुः ॥१०

हे बोधिदाता भगवन्, मेरी वाणी यद्यपि प्रमाण, नय, काव्यरीति और काव्यगुणों से

रहित होने के कारण अलंकार रहित है तो भी उस वाणी का प्रयोग मैंने आपकी स्तुति के निमित्त किया है, अतएव वह देव और मनुष्य आदि सभी प्राणियों के लिए अवश्य हित-कारक बनेगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, जैसे कि स्वाति नक्षत्र में तुच्छ भी पानी की बून्द सीप में पड़नेसे मोती बन जाती है ॥१०॥

आस्तां तव स्तुति-कथा मनसोऽप्यगम्या,
नामापि ते त्वयि पर कुरुते-नुरागम् ।
जम्बीर-मस्तु खलु दूरतरेपि देव !
नामापि तस्य कुरुते रसना रसालाम् ॥११

हे प्रभु ! जैसे दूर पड़ा हुआ भी नींबू मात्र स्मरण करने से मुंह में पानी लाता है और

अपने रस का स्वाद कराता है. उसी प्रकार आपके कल्याणकारी नाम का जप करने वाले के हृदय में, आपके नाम का उच्चारण आपके अपूर्व महिमायुक्त गुणों के प्रति भक्तिभाव का रस उत्पन्न करता है ॥ ११ ॥

नाना-मणि-प्रचुर-कांचन-रत्न-रम्यं,
स्वीयं प्रयच्छति पदं जनकः सुताय ।
त्वद्-ध्यान-मेव जिनदेव ! पदं त्वदीयं,
भव्याय नित्य-सुखदं प्रकटा-करोति ॥१२॥

पिता अपने पुत्र को मणि, रत्न और सुवर्ण आदि मूल्यवान धन सम्पत्ति से युक्त अपना पद देता है अर्थात् अपना अधिकारी बनाता है, परन्तु हे जिनेश्वर ! आपका ध्यान तो भव्य

जीवों को नित्य सुखदाई अविनाशी मोक्षपद देता है जोकि अविनश्वर होने के कारण शाश्वत है। अतएव हे भगवन ! पिता के द्वारा दी गई सम्पत्ति की अपेक्षा आपके ध्यान के द्वारा दी गई सम्पत्ति अनन्तगुण बहुमूल्य है ॥ १२ ॥

ज्ञानाद्यनन्त-गुण-गौरवपूर्ण-सिन्धुं,
बन्धु भवन्त-मपहाय पर क इच्छेत् ?।
प्राज्य प्रलम्य भुवन-त्रितयस्य राज्यं,
कः कामयेत किल किंकरता-मबुद्धिः ॥१३॥

हे प्रभु ! आप ज्ञानादि अनन्त गुणों के समुद्र है, संसार के अशरण जीवों के शरण-रूप है। दया के सिन्धु है, जगत के निष्कारण बन्धु है, ऐसे आपको छोड़ कर दूसरे को

चाहना कौन करे ? क्योंकि कौन ऐसा मूर्ख होगा कि जो त्रिभुवन का राज्य मिलने पर भी उसको छोड़ कर दासता की इच्छा करे ? अर्थात् कोई भी इच्छा नहीं कर सकता है ॥१३

त्वद्-गात्रता-परिणताः परमाणवोऽपि,
सर्वोत्तमा निरुपमाः सुषमा भवन्ति ।
लब्ध्वा शरण्य ! शरणं चरणं जनास्ते,
सिद्धा भवेयुरिति नाथ ! किमत्र चित्रम्
॥१४॥

हे जिनेन्द्र ! आपके शरीररूप में परिणित हुए जड़ परमाणु भी सुन्दर एवम् सर्वोत्तम शोभाशाली बन जाते हैं, तो फिर हे प्रभु ! कोई पुरुष आपके चरणों का शरण गह कर

सिद्ध पद को प्राप्त करे उसमें क्या आश्चर्य ॥ १४ ॥

कश्चण्डकौशिक-समंभव-सिन्धुपारं,
नेता सुदर्शन-समं च जगत्त्रयेपि ।
हे नाथ ! तत् कथय ते चरणाम्बुजस्य,
येनोपमा गुणलवेन घटेत लोके ॥१५॥

विषय विष वाले, दृष्टिविष चण्डकौशिक सर्प जैसे अधम को, और सुदर्शनसेठ जैसे शीलवान् उत्तम पुरुष के भेदभाव बिना सम-रूप से भवसिन्धु पार कराने वाला आपके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है। तो फिर हे नाथ! आप ही कहें कि आपके चरण कमलों की उपमा किस वस्तु से दी जाय? ॥१५॥

लोकोत्तरं सकलमंगल मोद-कन्दं,
स्यन्दंवचो-मृत रसस्य जग त्यमन्दम् ।
स्वर्गा-पवर्ग-सुखदं भव-दास्य-च्छन्दं,
दृष्ट्वामुदं भजति भव्य चकोर-वृन्दम्॥१६॥

हे प्रभु ! सभी लोकों में उत्तम तथा सभी प्रकार से मङ्गलकारी और आनन्ददायक ऐसा आपका मुखरूपी चन्द्र मण्डल कि जिसमें से आनन्द मङ्गल के धाम समवरण में देशना रूपी अमृत रस का झरना झरता है। देवलोक और मोक्ष के सुख को देने वाले ऐसे आपके मुख चन्द्र को देख कर चकोर पक्षीरूपी भव्य जीव सर्वदा आनन्दमग्न होते है। ॥१६॥

भ्रान्त्यापि भद्र-मुदित भवदीय नाम,
सिद्ध-विधायि भगवन् ! सुकृतानि सूतें।
अज्ञानतोपि पतित सितखड-खडम् ,
धत्ते मुखे मधुरिमाण-मखड-मेव ॥१७॥

जैसे अनजान में भी मुंह मे पड़ा मिश्री का टुकड़ा अखंड मिठास को देता है अर्थात सम्पूर्ण मुंह को मीठा बना देता है, इसी प्रकार हे प्रभु ! कल्याणकारी आपके नाम का उच्चारण यदि कोई भूल से भी करे तो वह पुन सम्पत्ति और पुण्य को उत्पन्न करता है, इसमें सन्देह की कोई सम्भावना नहीं ॥ १७ ॥

यो मस्तक नमयते जिन ! तेंघ्रिपद्मे
सर्वर्द्धि-सिद्धि-निचयः श्रयते तमेव।

तीर्थंकरः शुभङ्करः प्रविभूय मोयं,
स्थानं प्रयातिपरमं ध्रुव-नित्य शुद्धम्॥१८॥

हे प्रभु ! जो जीव नतमस्तक होकर आपके चरणकमलों में नमस्कार करता है उसको इस जगत में सभी प्रकार की ऋद्धि सिद्धि मिलती है। इतना ही नहीं बल्कि नमस्कार करने वाला जीव, उस नमस्कार के फलस्वरूप पुण्य के उदय से क्रमशः तीर्थङ्कर होकर जगत् कल्याण करने वाला हो जाता है और शाश्वत मोक्ष पद को प्राप्त करता है ॥१८॥

पृच्छामि नाथ-मधुना मुनिनाथ ! नित्यं,
प्राप्ता त्वया तरणतारणता हि कस्मात् ?।

सा नोत्तरं वितनुते त्वमपि प्रयात—,
स्तद् ब्रूहि कोऽस्ति परितोष-करस्तृतीयः
॥१९॥

हे मुनिनाथ! मैं इस नौका को नित्य पूछता हूँ कि हे नाव! यह तरने और तारने की कला तूने कहां से सीखी? परन्तु नौका तो कुछ उत्तर देती नहीं और आप भी निर्वाण प्राप्त कर सिद्धगति में विराज रहे हैं, तो हे प्रभु! आप ही कहो कि इस प्रश्न का सन्तोषकारक उत्तर देने वाला तीसरा कौन है? अर्थात् सुगुरु के अतिरिक्त कोई भी उत्तर देने में कोई भी समर्थ नहीं है।

पीयूष मत्र निज जीवन-सार-हेतु,
पीत्वानुवन्ति मनुजास्तनमात्रनाथ।

स्याद्वाद-सुन्दर-रसं भवतस्तु वाचं,
पीत्वा प्रयान्ति सुतरा-मजरा मरत्वम् ॥२०

हे नाथ ! इस लोक में मनुष्य यदि अमृत का पान करता है तो वह उसके प्रभाव से निश्चय दीर्घजीविता को प्राप्त करता है, जिसका कोई महत्व नहीं ! परन्तु जो भव्य आपकी अमृतमयी स्याद्वाद वाणी के रस का पान करता है वह तो सहज में ही अजर, अमर मोक्षपद को प्राप्त करता है ॥ २० ॥

चक्री यथा विपुल-चक्र-बला-दखंडं,
भूमंडलं प्रभुतया समलं-करोति ।
रत्नत्रयेण मुनिनाथ ! तथा पृथिव्यां,
जैनेन्द्र-शासन-परान् भविनो विधत्से॥२१॥

जैसे चक्रवर्ती अपने प्रधान अस्त्र चक्र रत्न के द्वारा छः खण्डों को जीत कर उन पर आधिपत्य स्थापित करता है उसी प्रकार हे मुनिनाथ ! आप भी अपने सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक्चारित्ररूप रत्नत्रयरूपी चक्र के प्रभाव से मिथ्यात्व को दूर कर भव्य जीवों को जैन शासन के वशवर्ती बनाते हैं ॥ २१ ॥

कालस्य मान-मखिलं शशि भास्कराभ्यां,
पक्ष-द्वयेन गगने गमनं खगानाम् ।
तद्वद् भवानपि भवाद् भगवन् ! जनानां,
ज्ञानक्रियोभयवशादिहमुक्तिमाह: ॥२२॥

जैसे दिन रात्रिरूपी काल का मान इस जगह में चन्द्र और सूर्य से होता है, जैसे

पक्षियों का आकाश मे गमन दोनों पांखों से होता है, उसी प्रकार हे भगवान् ! आपने इस संसार से जीवों की मुक्ति का उपाय, ज्ञान और क्रिया इन दोनों को कहा है ॥ २२ ॥

अनादिकं हृदि-गतं विषमं विषाक्तम् ,
संसार-कानन-परिभ्रमैक हेतुम् ।
मिथ्यात्व-दोष-मखिलं मलिनस्वरूप,
क्षिप्रं प्रणाशयति ते विमलःप्रभावः ।२३॥

हे प्रभु ! यह मिथ्यात्व दोष, जोकि अनादि है, प्राणियों के हृदय के भीतर जिसका निवास है, जो विषम अर्थात् भयङ्कर है, राग द्वेषादि रूप महाविषयों से जो भावित है, संसाररूपी भयानक अटवी में जिसके कारण जीव निरन्तर परिभ्रमण कर रहे हैं और जिसका स्वरूप स्व-

मारत मलिन है, ऐसे इस मिथ्यात्व दोष को आपका निर्मल स्वभाव क्षणमात्र में समूल नष्ट कर देता है ॥ २३ ॥

प्रमादिका विषय-मोह-वश गता ये,
कर्तव्यमार्गविमुखा· कुमतिप्रसक्ता.।
अज्ञानिनो विषय-घूर्णित-मानसाश्च,
सन्मार्गमानयति.तान् भवत प्रभाव. ॥२

हे नाथ। इस ससार में जो जीव प्रमादी, विषयी, मोह के वशीभूत होने से कर्त्तव्य विमुख होकर जीवन व्यतीत करते है, पापियों की सङ्गति से जो उन्मार्गगामी हो गये है, जिन्हें ज्ञान का लेश भी नहीं है, जिनका मन विषयरूपी सुरापान से घूम रहा है, ऐसे जीवों

की समानता चिन्तामणि आदि कभी नहीं कर सकते ! आप तो अनुपम हैं ॥ २६ ॥

ध्वान्तं न याति निकटे रवि-मंडलस्य,
चिन्तामणेश्च सविधे खलु दुःखलेशः ।
रागादि-दोष-निचया भगवं-स्तथैव,
नो यान्ति किंचिदपि देव ! भवत्समीपे ॥२

जैसे सूर्यमण्डल के समीप अंधकार नहीं जा सकता, चिंतामणि के समीप दुःख का अंश मात्र भी नहीं जा सकता, उसी प्रकार हे भगवान् ! राग-द्वेष आदि अठारह दोषों में से एक भी दोष आपके पास नहीं आ सकता ॥ २७ ॥

शीतांशुमण्डल-जला-मृत-फेनपुंज,
प्रोत्फुल्लितेप्सितसुपुष्पविशालकुंजम् ।
धर्मं निरूप्य परमं खलु दुःखभंज,
नित्यं विकासयसिभव्यट ! भव्यकंजम्॥२८

हे प्रभु ! आपने जिस धर्म का उपदेश दिया है वह तो निश्चय ही सकल दुःखों का नाशक है, चन्द्र मण्डल, जल, अमृत और फेन पुञ्ज के समान निर्मल और शान्तिप्रद है, मनोरथ-रूप मनोहर पुष्पों का विशाल लता मण्डप है। ऐसे परम मनोहर धर्म का भव्यों के हितार्थ प्ररूपण किया है। तथा हे कल्याणकारक ! आप सूर्य के समान भव्यरूपी कमलों को नित्य प्रफुल्लित करते हैं, इसी कारण उनके हृदय-

कोशस्थित सद्भावरूपी सुवास से समस्त दिङ्मण्डल सुगन्धित होरहा है ॥ २८ ॥

दूरस्थितोपि सितरश्मि-रत्नं स्वकीयैः,
शुभ्रैर्विकासिकिरणैः सुविकासभावम् ।
अन्तर्गतं वितनुते किल कैरवाणां,
तद्वद्जिनेन्द्र ! गुणराशिरयं जनानाम् । २९

जैसे दूर में रहा हुआ चन्द्रमा अपनी किरणों के प्रभाव से, सरोवरों में उगे हुए कैरव-समूह (रात्रि विकासी कमलों) के अंतस्तल को विकासित करता है उसी प्रकार हे जिनेन्द्र ! आप भी अपने उज्ज्वल गुणों के प्रभाव से भव्यजनों के हृदयरूपी कमलों को विकसित करता है, अर्थात् आपके अनुपम

गुण के महात्म्य श्रवण से भव्यों का हृदय आनंदित हो जाता है ॥ २९ ॥

शीतांशु-रश्मि निकर प्रसरानुपगाद्,
यच्चन्द्रकान्त-मणय परित द्रवन्ति ।
तद्-वत्-त्वदीय महिम श्रवणेनभव्याः,
शान्ताः प्रवृद्धकरुणा द्रविता भवन्ति॥ ३०

हे प्रभु ! जैसे चन्द्रमा के शीतल किरणोंकी प्रभा से पृथ्वी पर ही हुई चन्द्रकांत मणियां द्रवित होती है अर्थात् पिघलाती है उसी प्रकार आपकी अनुपम महिमा के सुनने से, भव्योंके हृदय में से दया और अहिंसा का झरना झरने लगता है ॥ ३० ॥

दु:ख-प्रधान-शिव-वर्जित-हीयमाने,
काले सदा विषय-जाल-महा-कराले।
भव्या भवत्प्रवचनं शिवदं जिनेन्द्र!
पीत्वात्मशान्तिमुपयान्तिनितान्तशुद्धाम्
॥२१॥

हे प्रभु! अवसर्पिणी के इस विषम पंचम काल में जीव मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते। इस काल में दु:ख के भाव बढ़ रहे हैं, आयु और बल का ह्रास होरहा है, ऐसे इस दुष्षम पञ्चम आरा में भी भव्यजन, शिवसुख के देने वाले अमृत समान आपके वचन का अस्वाद न करके परम आत्म शान्ति को प्राप्त करते हैं २१॥

षट्कायनाथ ! मुनिनाथ ! गुणाधिनाथ !
देवाधिनाथ ! भविनाथ ! शुभैकनाथ ! ।
अस्मान् प्रबोधय जिनाधिप ! दूरतोपि,
किंनोस्मितानि कुरुते कुमुदानिचन्द्रः ?
॥३२॥

हे षट्जीवनिकायों के नाथ ! हे मुनिश्वर ! हे केवलज्ञान केवलदर्शन आदि अनन्त गुणों के धारक ! हे देवाधिदेव ! हे भव्यों के हित विधायक ! हे जीवमात्र के कल्याणकारक जिनेन्द्र भगवान ! आप बहुत दूर सिद्धिस्थान में विराज रहे हैं, तो भी आप कृपा करके ज्ञान रस के प्रवाह से हमारे हृदयकमलों को प्रफुल्लित करें। यह हमारी प्रार्थना अनुचित नहीं है, क्योंकि दूर में रहा हुआ चन्द्रमा भी तो कुमुदों को विकसित करता है ॥ ३२ ॥

वृक्षोऽपि शोकरहितो भवदाश्रयेण,
जातस्ततः स यदशोक इति प्रसिद्धः ।
भव्याः पुनर्जिन ! भवच्चरणाश्रयेण,
किंनाम कर्मरहिता न भवन्त्यशोकाः ?
॥२३॥

हे प्रभु ! कंकेलि नामक वृक्ष, आपके संसर्ग से शोकरहित होकर जगत में अशोक नाम से प्रसिद्ध हुआ, तो फिर हे नाथ ! भव्य जीव आपके चरणों का आश्रय लेकर कर्मरहित हो अशोक (शोकरहित) अवस्था को प्राप्त करें, इसमें आश्चर्य ही क्या ? ॥ २३ ॥

सिंहासने मणिमये परिभासमानं,
नाथं निरीक्ष्य किल सन्दिहते विधिज्ञाः ।

इन्दुः किमेष ? नहि यत् स कलङ्कः,
किं वा रविर्न स तु चण्डतरप्रकाशः ? ॥३४॥

हे नाथ ! समवशरण में मणिरत्नजटित सिंहासन पर विराजमान तथा तेज के पुञ्जरूप आपको देख कर तत्व जिज्ञासु बुद्धिमान पुरुष आपके स्वरूप के निर्णय में शङ्काशील होते हैं और वे तर्क करते हैं क्या ये चन्द्रमा है ? नहीं, क्योंकि चन्द्रमा तो कलङ्कयुक्त है, तो क्या ये सूर्य है ? नहीं, क्योंकि सूर्य का ताप तो अतिशय प्रचण्ड होता है परन्तु ये तो अतिशय शीतल हैं ॥३४॥

पुञ्ज-स्त्विषा-मिति पुरानिरणायि पश्चाद्-,
व्यक्ताकृति-स्तनुधरोय-मिति प्रवुद्धैः ।

भव्यैः पुमानिति पुनः प्रशम-स्वभावः,
कारुण्य राशि रिति वीरजिनःक्रमेण॥२५॥

हे प्रभु! इस प्रकार संशय करने के बाद, बुद्धिमान भव्य जनों ने आपके स्वरूप के विषय में प्रथम यह निर्णय किया कि यह कोई तेज पुञ्ज है। फिर कुछ आगे बढ़ कर आकार के स्पष्ट दर्शन से उन्हें यह विश्वास हुआ कि ये कोई देहधारी पुरुष है, और कुछ आगे जाने पर उन्हे ज्ञात हुआ कि ये शान्त स्वभाव वाले कोई महान् पुरुष हैं। फिर अधिक समीप जाने पर उन्हें ज्ञान हुआ कि ये तो कोई दूसरे नहीं हैं किन्तु करुणा के सागर वीर जिनेश्वर भगवान् हैं ॥२५॥

देवै-रचित्त कुसुम-प्रकरस्य वृष्ट्या,
दिङ् मडल सुरभित भवतोतिशेषात् ।
स्याद्वाद-चारु-रचना-वचना-वलीना,
वृष्ट्या भवन्ति भविन प्रशमे निमग्ना॰
॥३८॥

समवसरण में हे प्रभु ! आपकी अतिशय महिमा से प्रेरित होकर देवगण अचित्त पुष्पो की वृष्टि करते है जिससे दसो दिशाये (दिग्मण्डल) सुगंधित हो जाती है, वातावरण नितान्त प्रशान्त हो जाता है, और फिर आपकी अनेकान्तमयी प्रशस्त दिव्य वाणी की वृष्टि होती है, उससे भव्यजीव शान्ति के सागर मे निमग्न होकर अपूर्व आनन्द का अनुभव करते है ॥३८॥

लोकोत्तरा सकल-जीव वचो-विलासा,
पीयूषवत्-परिणता भवदीय-भाषा ।
सर्वर्द्धि-सिद्धि-गुणवृद्धि-विधान-दक्षा,
साक्षात्तनोति कुशलं सकलं सुलक्षा ॥३७

हे भगवन् ! आपकी देशना समस्त जीवों की अपनी अपनी भाषा में परिणित हो जाती हैं। वह अमृत के समान मधुर और आकर्षक है, कल्याणकारिणी है, सिद्धि और शान्ति आदि अनुपम गुणरत्नों को देने वाली है, तथा सम्पूर्ण कुशल को देने वाली है ॥ ३७ ॥

गोक्षीर-नीर-शशि-कुन्द-तुषार-हार-,
शुक्लै-र्वियद्-विलसितैःशुभ-चामरौघैः ।

ध्यान सितं तव विभो ! विनिवेद्यते यत्,
सर्वज्ञता तदनु कर्म-समूल-नाशः ॥३८॥

- हे प्रभु ! गाय का दूध, निर्मल जल, कुन्द पुष्प, हिम (बरफ) और मोती के हार के समान उज्जवल जो स्वच्छ चामर आपके ऊपर ढोरे जारहे हैं वे आपके शुक्ल ध्यान को सूचित करते हैं और शुक्ल ध्यान से सर्वज्ञता आती है, सर्वज्ञता से सकल कर्मों का नाश होता है इन बातों के सूचक हैं ॥३८॥

आखडलै रवनि-मडल-मागतै-स्तै-,
र्भामडल तव नुत मुनिमडलैश्च ।
मोहा-न्धकार-परिहार कर-जीनेन्द्र,
तुल्य कथ भवति तद् रविमडलेन॥३९॥

हे नाथ ! पृथ्वी पर देवलोक से उतर कर आये हुए इन्द्रगण और पृथ्वी पर रहने वाले मुनिगण आपके भामण्डल की स्तुति करते हैं और कहते हैं कि-हे जिनेन्द्र ! आपका भामण्डल द्रव्य अन्धकार का विनाशक तो है ही परन्तु साथ मे मोहरूपी भाव अन्धकार का भी विनाशक है, और सूर्य तो मात्र द्रव्यरूप अन्धकार का ही विनाशक है, अतएव आपके भामण्डल की तुलना सूर्य कभी नहीं कर सकता ? ॥ ३६ ॥

यत्कर्म-वृन्द सुभटं विकटं विजेता,
लोकत्रय-प्रभु-रसा-वतिशेष-धारो।
तस्मा-ज्जिनेन्द्र-सरणिं शरणीकुरुध्वं,
भव्या !इतिध्वनतिखेकिलदुंदुभिस्ते॥४०

हे नाथ! आपके अतिशय प्रभाव के कारण आकाश में जो दुंदुभि नाद होता है, वह दुन्दुभि नाद निश्चय ही यह कहता है कि-हे भव्य जीवों! इस विकट कर्म समूह रूपी शत्रुओं को जीतने वाले, तीन लोक के नाथ, चौंतीस अतिशयों के धारक जिनेन्द्र भगवान जो मार्ग बतलाते है उस मार्ग का अवलम्बन करो ॥४०॥

अत्युज्ज्वल विजित-शारद-चन्द्र-बिम्ब,
समोदक सकल-मंगल-मंजु-कन्दम्।
छत्रत्रय तव निवेदयते जिनेन्द्र!,
रत्नत्रय प्रभुपद शिवद ददाति ॥४१॥

हे जिनेन्द्र! समवसरण में आपके ऊपर जो उज्ज्वल तीन छत्र तने हुए है, जिनकी प्रभा

दिव्यं प्रभाव मवलोक्य सुरादयस्ते,
पीयूष-सार-वचनानि निशम्य सम्यक्।
आनन्द - वारिधि- तरङ्ग-निमग्न-चित्ता-,
स्त्वद्वर्णनाक्षमतया प्रणमन्ति भावात्
॥४४॥

हे प्रभु! भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देव आदि, आपके दिव्य प्रभाव को देख कर, और आपकी अमृतमयी वाणी को सुन कर आनन्द सागर की तरङ्गों में अपने चित्त को निमग्न कर देते हैं, और आपके अनुपम गुणों को वर्णन करने में असमर्थ हो, आन्तरिक भक्तिभाव के आवेश से आपको वारम्वार नमस्कार करते है ॥४४॥

तुभ्य नमः सकल-मगल-कारकाय,
तुभ्य नमः सकल-निर्वृति-दायकाय
तुभ्य नमः सकल-कर्म-विनाशकाय,
तुभ्य नमः सकल-तत्त्व-निरूपकाय ॥४५

हे प्रभु ! समस्त मङ्गलों के कारक आपको नमस्कार हो, सभी प्रकार के सुख शान्ति देने वाले आपको नमस्कार हो, ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों के विनाशक आपको नमस्कार हो, और समस्त तत्वों के प्ररूपक आपको नमस्कार हो ॥४५॥

तुभ्य नमः सकल-जीव-दया पराय,
तुभ्यं नम शिवद-शासन-भास्कराय ।

तुभ्यं नमः सकल-लोक-शुभंकराय,
तुभ्यं नमः सततमस्तु जिनेश्वराय ॥४६॥

हे भगवान् ! सकल लोकवर्ती जीवों को अभय देने वाले आपको नमस्कार हो, मोक्षपद को प्राप्त करने वाले और शासन के सूर्य समान आपको नमस्कार हो, प्राणिमात्र के हित कारक आपको नमस्कार हो। हे दयानिधि जिनेन्द्र आपको सर्वदा नमस्कार हो ॥४६॥

रक्षः-पिशाच-निकरै-रदयो-पसृष्टं,
दुर्वृत्त-दुष्ट-खल-सृष्ट-विसृष्ट-मुष्टम् ।
दारिद्र्य-दुःख-गद-जाल-विशाल-कष्टं,
नष्टं भवत्यखिल-माशु भवस्प्रभावात्
॥ ४७ ॥

हे नाथ! राक्षस और पिशाच के उपसर्ग दुष्ट जनों की मूँठ दुख दारिद्र्य नाना प्रकार के रोग, शोक और भयङ्कर कष्ट आदि सभी आपके प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं ॥४७॥

चौराग्नि-सिंह-गज-पन्नग-दुष्ट-दाव—,
हिंस्रप्रचार-खल-बन्धन-दुर्ग-भूमौ।
सर्वं भयं भयकरं प्रणिहन्ति नाथ!
त्वद्ध्यानमात्रमखिलं भुवनत्रयेऽस्मिन्
॥ ४८ ॥

चोर, शत्रु, सिंह, हाथी, सर्प, दावानल और हिंसक प्राणियों के संचार से, तथा दुष्ट मनुष्यों के द्वारा होने वाले बन्धन के भय से जो भूमि अत्यन्त दुर्गम है, ऐसी भूमि में भी हे

नाथ! आपका ध्यान धरने से मनुष्य सभी प्रकार की विपत्तियों से उभर (बच) जाता है, क्योंकि आपका ध्यान सभी विपत्तियों को दूर भगा देता है। इसलिए आपका ध्यान त्रिभुवन में सर्वश्रेष्ठ है ॥ ४८ ॥

सिंहो-रग-प्रखर-सूकर-हिंस्रजालै—,
व्याप्ता-टवी विकट-लुण्टक-कण्ट-नालैः।
सर्वर्त्तु-पुष्प-फल-पल्लव-शोभमाना,
सा नन्दनं भवति ते स्मरणाज्जिनेन्द्र !
॥ ४९ ॥

हे जिनेन्द्र! सिंह सर्प अत्यन्त तीखे दांत वाले शूकर तथा अन्य हिंसक प्राणियों के निवास स्थान होने से विकराल, चोर, डाकू

आदि का निवासस्थान होने से भयानक, और तीक्ष्ण काँटों से व्याप्त होने के कारण अत्यन्त दुर्गम जो अटवी है वह भी, आपके स्मरण मात्र से सभी ऋतुओं के पत्र, पुष्प और फलों से सम्पन्न होकर नन्दन वन के समान आनन्ददायक हो जाती है ॥ ४९ ॥

घोर-तिघोर-विकटे सुभटेऽतिकष्टे,
अष्टे चले त्रिविध दुःख-शतै र्विशिष्टे।
शस्त्राहति प्रविचलद्रुधिरप्रवाहे,
युद्धे तनोति तवनाम विशुद्ध-शान्तिम्
॥ ५० ॥

हे प्रभु दोनों पक्षों के लिए महाकष्टकारी दारुण युद्ध जहां होरहा है शत्रु के त्रास से और क्षुधा, पिपासा आदि से व्याकुल होकर सैनिक जहां से भाग रहे हैं, जहां पर शस्त्र के आघातसे आहत योद्धाओंके शरीरसे निरन्तर प्रबल शोणित प्रवाह वह रहा है, ऐसे घोर संग्राम में भी आपका नाम स्मरण भव्य जीवों को शांति देता है ॥ ५० ॥

सर्वर्द्धि-सिद्धद-मिदं परमं पवित्रं,
स्तोत्रं च यः पठति वीर-जिने-श्वरस्य ।
चिन्तामणिः सुरतरुः सकलार्थसिद्धिः,
संसेवितुं तमनुकूलयितुं समेति ॥ ५१ ॥

श्री वीर जिनेश्वर भगवान के परम पवित्र सर्वदा ऋद्धि सिद्धि के देने वाले इस स्तोत्र को जो मनुष्य भक्तिभावपूर्वक पढेगा उसकी प्रसन्नता के निमित्त, चिन्तामणिरत्न, कल्प वृक्ष और अनेक प्रकार की सिद्धिया उसकी सेवा मे सर्वदा उपस्थित रहेगी, अर्थात इस स्तोत्र के पढने से इह लोक सम्बन्धी सभी सिद्धिया प्राप्त होती हैं और परम्परा से वह मोक्ष का भागी बनता है ॥ ५१ ॥

श्री-वर्द्धमान-शुभनाम-गुणा-नुबद्धा,
शुद्धा विशुद्ध गुण-पुष्प-सुकीर्ति-गन्धाम्
यो घासीलाल-रचिता स्तुति-मजु-माला,
कठे बिभर्ति खलु त समुपैति लक्ष्मीः ॥

॥ इतिश्री जैनाचार्य -जैनधर्मदिवाकर-
पूज्यश्री घासीलालजी महाराज विरचितं
श्रीवर्द्धमान भक्तामरस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

श्री वर्धमान प्रभु के शुभ नामरूपी सूत में उनके शुद्ध, निर्मल गुणरूपी फूलों को गूथ कर कीर्तिरूपी सुगन्धि से परिपूर्ण पूज्य श्री घासीलालजी महाराज द्वारा रचित इस स्तुति रूपी सुन्दर माला को जो भव्य जीव अपने कण्ठ में धारण करेगा उसको त्रिभुवन की द्रव्य और भावलक्ष्मी स्वयं उपस्थित होकर वरेगी ॥ ५२ ॥

॥ इति श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर पूज्य
श्री-घासीलालजी-महाराज-विरचित
श्री-भक्तामर स्तोत्र का हिन्दी
भाषानुवाद सम्पूर्ण ॥

(३) अथ सुखस्मरण

सुखमूल गणधरं, वर्धमानानुयायिनम् ।
द्वादशाङ्गधरं नित्यं, वन्दे तं गौतमप्रभुम्
॥ १ ॥

श्री वर्धमान प्रभु के अनुयायी द्वादशाङ्ग के धारक सुख के मूल श्री गौतमस्वामी को नित्य नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥

यस्य स्मरणमात्रेण, सर्वलब्धिः प्रजायते ।
ऋद्धिः सिद्धिः समृद्धिश्च, वन्दे तं गौतम
॥ प्रभुम् ॥२॥

जिनके स्मरण मात्र से सभी प्रकार की लब्धि ऋद्धि सिद्धि और समृद्धि भव्य जीवों को मिलती है, उन महाप्रभावशाली श्री गौतम स्वामी को नित्य नमस्कार करता हूँ ॥२॥

नेतारं सर्वसंघस्य, जेतारं कर्मवैरिणाम् ।
त्रातारं सर्वजीवानां, वन्दे तं गौतमं
प्रभुम् ॥३॥

समस्त सङ्घ के नेता कर्म शत्रुओं को जीतने वाले और सभी जीवों के रक्षक श्री गौतमस्वामी को नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

तनयं वसुभूतेश्च, पृथिव्या अङ्गजातकम् ।
दिव्यज्योतिर्धरं दिव्य,- रूपलावण्य-
संयुतम् ॥४॥

दिव्यसंहननंचैवदिव्यसंस्थानशोभितम् ।
दिव्यर्द्धिं दिव्यलेश्यं च, वन्दे तं गोतमं
प्रभुम् ॥५॥

वसुभूति के पुत्र पृथ्वीमाता के अङ्गजात दिव्यज्योति के धारक दिव्यरूपलावण्य से संयुक्त, दिव्यसंहनन धारी, दिव्य संस्थान से सुशोभित और दिव्य ऋद्धि एवं दिव्य लेश्या-वाले श्री गौतमस्वामी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥४-५॥

दिव्यप्रभावसंपन्नं, दिव्यतेजः समर्चितम्
दिव्यलब्धिधरं दिव्य, वन्दे तं गौतमं प्रभुम् ॥६॥

दिव्य प्रभाव से सम्पन्न, दिव्य तेज से युक्त, दिव्यलब्धिधारी ऐसे श्री गौतमस्वामी को नमस्कार करता हूँ ॥ ६ ॥

चतुर्ज्ञानधरं शुद्धं, विद्याचरणपारगम् ।
धारकं सर्वपूर्वस्य, वन्दे तं गौतमं प्रभुम् ७

चार ज्ञान के धारक, विद्या और चारित्र में पारङ्गत, सकल (चौदह) पूर्वों के धारण करने वाले ऐसे विशुद्ध गौतमस्वामी को 'नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥

गोशब्दात् कामधेनुत्वं,
तकारात् तरुतुल्यता ।
मकारान्मणिसाम्यं च,
ज्ञायते गौतमप्रभोः ॥ ८ ॥

गौतम प्रभु के 'गौतम' इस नाम के अन्तर्गत 'गो' शब्द से उनमें कामधेनुतुल्यता, 'त' से कल्पवृक्षतुल्यता और 'म' से चिन्तामणितुल्यता प्रकट होती है ॥८॥

कामधेनु समोलोके, सर्वसिद्धिप्रदस्तथा ।

कल्पवृक्षसमो वाञ्छा-पूरणे चिन्तिते
मणिः ॥९॥

सभी प्रकार की सिद्धियों के दायक होने से गौतम स्वामी इस लोक में कामधेनु समान है, अभिलाषा के पूरक होने से कल्पवृक्षसमान है और चिन्तित पदार्थों के दायक होने से चिंतामणि समान हैं ॥९॥

अंगुष्ठे चामृत यस्य,
यश्च सर्वगुणोदधिः ।
भण्डारः सर्वलब्धीना,
वन्दे त गौतम प्रभुम् ॥१०॥

जिनके अँगूठे में अमृत है जो सभी गुणों के सागर है सभी लब्धियों के जो

भण्डार हैं ऐसे गौतम स्वामी को नमस्कार करता हूँ ॥ १० ॥

आमर्षौषधि लब्धिश्च,
विप्रुडोष धिरेव च
श्लेष्म-जल्लोषधी चेव,
विपुलर्जुमती तथा ॥११॥
संभिन्नश्रोत्रलब्धिश्चा,
वधिलब्धिस्तथैव च
मनःपर्यंयलब्धिश्च
लब्धिःकेवलिनस्तथा ॥१२॥
लब्धिर्गणधरस्यापि,
लब्धि पूर्वधरस्य च ।

पदानुसारिलब्धिश्च,

लब्धि.क्षीरास्रवस्य च ॥१३॥

घृतास्रवस्य लब्धिश्च,

लब्धिर्मध्वास्रवस्य च ।

वैक्रियाहारलब्धी च,

लेश्यालब्धिस्तथैव च ॥१४॥

अक्षीणमहानसस्य,

लब्धिर्जङ्घाचरादिका ।

लब्धयः सकलास्तस्य,

वशे तिष्ठन्ति सर्वदा ।१५॥

(१)-आमर्शौषधिलब्धि, (२) विप्रुडो-षधिलब्धि, (३)-श्लेष्मौषधिलब्धि, (४)-जल्लो-षधिलब्धि, (५) विपुलमतिलब्धि, (६)- ऋजु-

मतिलब्धि, (६)- संभिन्नस्रोतलब्धि, (७)-अवधिलब्धि, (८)-मनःपर्यायलब्धि, (९)-केवलिलब्धि, (१०)- गणधरलब्धि, (११)-पूर्वधरलब्धि, (१२)- पदानुसारि लब्धि, (१३)- क्षीरास्रवलब्धि. (१४)- घृतास्रवलब्धि (१५)-मध्वास्रवलब्धि (१६)- वैक्रियलब्धि, (१७)-आहारकलब्धि, (१८)- लेश्यालब्धि, (तेजोलेश्यालब्धि, शीतललेश्यालब्धि,) (१९)-अक्षीणमहानसलब्धि, और इनके अतिरिक्त जङ्घाचरण आदिक सभी लब्धियां गौतम स्वामी के अधीन में सर्वदा रहती हैं ॥११-१२-१३-१४-१५॥

ऋद्धिः सिद्धिः सुखं संपद्,
यशः कीर्तिर्जयस्तथा ।

विजयश्चास्य पाठेन,

लभ्यते नात्र संशयः ॥१६॥

श्री गौतम प्रभु के इस स्मरण के पाठ करने से भव्यों को ऋद्धि, सिद्धि, सुख, संपत्ति यश, कीर्ति और विजय का लाभ सर्वदा होता है, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं है ॥१६॥

दिव्यं सुखं परभवे,

तथाऽनन्तं च शाश्वतम् ।

अव्याबाधं ध्रुवं सौख्य,

लभ्यते परम पदम् ॥ १७ ॥

इस स्तोत्र के स्वाध्याय करने वाले परभव में देवलोक के सुखों को पाते हैं, तथा कर्मों

का क्षय करके परम्परा से अनन्त शाश्वत, अव्याबाध, ध्रुव सौख्यस्वरूप परम पद मोक्ष की प्राप्ति करते हैं ॥१७॥

इति सुखस्मरण ॥ ४ ॥



(४) अथ सप्तस्मरण ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ ऋषभादिचतुर्विंशति-
जिनेन्द्रभ्यो नमः।

॥ श्री गौतमस्वामिलब्धिर्भवतु ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ ऋषभदेव भगवान से लगा महावीर स्वामी तक के चौवीसा तीर्थंकर देव को मेरा नमस्कार होवो ? श्री गोतम स्वामी जसी लब्धि होवो।

॥ मंगलाचरण ॥

चिन्तामणिमहाविद्ये
श्रीवारे सर्वसौख्यदे।

अचिन्त्यशुभदे शुद्धे,
संपत्सिद्धिप्रदे नमः ॥ १ ॥

हे चिन्तामणि महायन्त्रे ? हे श्रीधारं-लक्ष्मी की धारास्वरूप! हे सभी प्रकार के सौख्यों को देनेवाली! हे अचिन्त्य शुभों को देने वाली! हे शुद्धस्वरूप! हे संपति और सिद्धि को देने वाली! तुम को नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

आनन्दकन्दसंभूते, महानन्दिममहोत्सवे।
सदाजिनेन्द्रभक्तानां संपत्सिद्धिप्रदे नमः
॥ २ ॥

हे आनन्दकन्द के उत्पत्तिस्थान ! हे महा लक्ष्मी ! हे महोत्सवयुक्त ! हे जिनेन्द्र भगवान के भक्तों को सर्वदा सम्पत्ति और सिद्धि देने वाली ! तुमको नमस्कार करता हूं ॥ ७ ॥

नानाशास्त्रं समादाय

श्रीधारा सुखदा सदा ।

लोकोत्तरा लौकिकी च

घासीलालेन तन्यते ॥ ३ ॥

अनेक शास्त्रों से उद्धृत करके इस श्री धारा स्तोत्र की रचना पूज्य श्री घासीलालजी महाराज करते हैं। यह श्रीधारा सर्वदा सुख देनेवाली है और यह लोकोत्तर और लौकिक

भेद से दो प्रकार की है ॥ ३ ॥

ॐ ह्रँ ी श्रीँ क्लीँ संपत्प्रदे श्रीधारे सुधारे, सुधाधारे सुखे सुखरूपे सुखदे रुचिरप्रभे रुचिरकान्ते रुचिरवर्णे रुचिर-लेश्ये रुचिरध्वजे सिद्धे सिद्धिरूपे, सिद्धि-धरे सिद्धिदे, पूर्णे पूर्णरूपे पूर्णप्रभे, सूर्य-कान्ते, सूर्यवर्णे सूर्यलेश्ये, पद्मे पद्मरूपे पद्मवर्णे पद्मलेश्ये, शुक्ले शुक्लरूपे शुक्लवर्णे शुक्ललेश्ये, इष्टे, इष्टरूपे इष्टदे, कान्ते कान्तरूपे कान्तदे, प्रिये प्रियरूपे प्रियदे, मनोज्ञे मनोज्ञरूपे मनो-

अदे, सौम्ये, सौम्यरूपे सौम्यदे, शुभे, शुभरूपे शुभदे, सुभगे, सुभगरूपे सुभगदे, ततमे तितिमे, थथमे थिथिमे, ददमे दिदिमे दुदुमे, धधमे धिधिमे धुधुमे, ककमे किकिमे कुकुमे, खखमे खिखिमे खुखुमे। इ ए ए ए रक्ष रक्ष मां मर्व ममाधीन च सर्व विघ्नतः।

यह महाविद्या इस प्रकार —

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सपन्ध्रदे० इत्यादि विशेषणवाली हे श्रीधारा मेरी रक्षा करो, और मेरे आश्रितों को सभी विघ्नोंसे बचाओ।

चंद्रे चंद्ररूपे चंद्रवर्णे चन्द्रत्तेश्ये चंद्रोत्तमे चंद्रशेखरे, यथा शशी शिशिरकिरणैः संतापं हरति, तथैव मम मत्परिवारस्य च दुःखदारिद्रयं संतापं हर हर स्वाहा। यंत्रे यंत्ररूपे मंत्रे मंत्ररूपे तंत्रे तत्ररूपे सर्वं मम वश्यं कुरु कुरु। कर्षे कर्षवति हर्षे हर्षवति मम शरीरे मम गृहे मम कुटुम्बे अचिन्त्य हर्षं कुरु कुरु। चिन्तितं सर्वं सुखं शीघ्रं मह्यं देहि देहि।

हे चंद्र के समान आह्लादक, चन्द्ररूप, चन्द्र जैसे वर्णवाली, चन्द्रसदृश लेश्यावाली, चन्द्र के समान उत्तम, चन्द्र के मुकुटवाली ! जैसे चन्द्रमा अपनी शीतल किरणों से सन्ताप को दूर करता है उसी प्रकार आप मेरे और मेरे परिवारके दुःख, दारिद्र्य और सन्ताप को दूर करो। हे यन्त्रवाली ! हे यन्त्ररूप ! हे मन्त्रवाली ! हे मन्त्ररूप ! हे तन्त्रवाली ! हे तन्त्ररूप ! सभी मेरे वश करो। हे दर्पवाली ! हे दर्परूप ! मेरे शरीर में, मेरे घर मे, मेरे कुटुम्ब मे अचिन्तित सुख दो, और मेरे चिन्तित सभी सुख मुझे दो।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं

रत्नवर्षिणि अंक रत्न स्फटिकरत्न हीरक वैडूर्यरत्न लोहिताक्ष रत्न हंस गर्भ पुलाक ज्योतिः सौगन्धिकादिविविध रत्नानि वर्षय। बहुधनधान्यैर्मम कोश-कोष्ठागारं पूर्णं कुरु कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं हे रत्नवर्षिणी ? (हे रत्नोंकीवर्षा करने वाली) अङ्क रत्न, स्फटिकरत्न, हीरा, वैडूर्यरत्न, लाहितात्त-रत्न, हंसगर्भ, पुलाक, ज्योतिसौगन्धिक आदि विविध रत्नों की वर्षा करो। हे हिरण्यसुवर्ण-

वर्षिणि ? (हे हिरण्यसुवर्ण बरसाने वाली ?) मेरे घर मे हिरण्यसुवर्ण की वर्षा करो ? बहुत धन्य धान्य से मेरे कोष और कोठार को पूर्ण भरो।

अमृते, अमृतोपमे, अमृतद्रवे अमृतस्रवे अमृतवदने अमृतसेचने अमृतपूर्णे मां ममाधीनान् अमृतमयान् कुरु कुरु।

हे अमृते ? हे अमृत की उपमावाली ? (हे अमृत समान ?) हे अमृत के समान तरल ?, हे अमृत की धारा बहाने वाली ?, हे

अमृत के समान सुख वाली ?, हे अमृत का सेचन करने वाली ?, हे अमृत पूर्णे ? मुझको और मेरे अधीन सभी लोगों को अमृतमय करो ।

ऐं कामराज क्लीं शुद्धे बुद्धे बुद्धरूपे बुद्धिदे सिद्धे सिद्धिरूपे सिद्धिदे मम सर्वकार्याणि साधय साधय । ॐ अर्हं वशिनि मोहनी सर्वान् मम वश्यान् कुरु कुरु सर्वान् मोहय मोहय ॐ ह्रीं श्रीं सुखसुधाहिरण्यसुवर्णवर्षिणि मम सुखं वर्षय २ सुधां वर्षय २, हिरण्यं

वर्षय २, सुवर्ण वर्षय २, आभङ्करे प्रभङ्करे, चन्द्रे चन्द्रकान्ते चन्द्रावर्ते चंद्रवर्णे चन्द्रलेश्ये चन्द्रश्रेष्ठे चन्द्रशेखरे सूरे सूर्यप्रभे सूर्यकाते सूर्यलेश्ये सूर्यश्रेष्ठे सूर्यशेखरे मम लोकोत्तर सुखदं चमत्कार कुरु २ ॐ ह्रीं घृणि सूर्यः आदित्य श्रीं मम सर्वाधिव्याधि चिन्तारोगशोकान् नाशय २, मम तुष्टि पुष्टि सुखं च कुरु कुरु। ॐ ह्रीं, श्रीं क्लीं नमो भगवति अन्नपूर्णे धनधान्य वर्षय २। सर्वसिद्धि-

दायिनि सर्वसुखदायिनि श्री सीमंधर-
स्वामिनं सर्वज्ञं सर्वदर्शिनं जिनमनुस्मर,
गणधर, सत्यमनुस्मर, निर्ग्रन्थप्रवचन-
मनुस्मर, आदिनाथजिनमनुस्मर, शांति
नाथजिनमनुस्मर, पार्श्वनाथजिनमनु-
स्मर, वर्द्धमानजिनमनुस्मर, शेषसर्व-
जिनमनुस्मर, अवधिजिनमनुस्मर, मनः
पर्ययजिनमनुस्मर, केवलिजिनमनुस्मर,
आमर्शौषधिमनुस्मर, विप्रुडोषधिमनु-
स्मर बीजबुद्धिमनुस्मर, अक्षीणमहान-
सलब्धिधरमनुस्मर, नवपूर्वधरमनुस्मर-

यावच्चतुर्दशपूर्वधरमनुस्मर, वैक्रियलब्धि-धरमनुस्मर, आहारकलब्धिधरमनु स्मर।

ऍ कामराजक्ज़ी, हे शुद्धे । हे बुद्धे । हे बुद्धरूपे । हे बुद्धि दे । हे सिद्धे । हे सिद्धिरूपे हे सिद्धि दे । मेरे सभी कार्यों को सिद्ध करो। ॐ अर्हं हे वशिनी । हे मोहिनी । सभी को मेरे वश करो । सभी को मोहित करो। ॐ ह्रीं श्रीं हे सुखसुरा-हिरण्यसुवर्ण को बरसाने वाली । मेरे लिये सुख की वर्षा करो, सुरा की वर्षा करो, हिरण्य की वर्षा करो, सुवर्ण की वर्षा करो। हे आभकरे !

हे प्रभंकरे ! हे चन्द्रे ! हे चन्द्रकान्ते ! हे चन्द्राब्रर्ने । हे चन्द्रवर्णे ! हे चन्द्रलेश्ये! हे चन्द्र श्रेष्ठे । हे चन्द्रशेखरे ! हे सूरे ! हे सूरप्रभे ! हे सूरकांते ! हे सूरलेश्ये ! हे सूर श्रेष्ठे ! हे सूरशेखरे ! मुझको लोकोत्तर सुखदायी चमत्-कार दो । ॐ ह्रीँ घृणिः सूर्यआदित्य श्रीँ मेरे सभी आधि, व्याधि, चिन्ता, रोग, शोकों को नष्ट करो, मुझको तुष्टि, पुष्टि और सुख दो । ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ हे सर्वसिद्धिदायिनि ! हे सर्वसुखदायिनि ! सर्वज्ञ, सर्वदर्शी श्री सीमन्धर स्वामी जिनका स्मरण करो, गणधरसत्य का स्मरण करो, निर्ग्रन्थ प्रवचन का स्मरण करो, आदिनाथ जिनका स्मरण करो, शान्तिनाथ

सकलजिनशासनदेवमनुस्मर, सकलजिनशासनदेवीमनुस्मर, बलकूटे बलदेवमनुस्मर, गंधमादने गंधमादनदेवमनुस्मर, ब्राह्मीं सुन्दरीमनुस्मर, श्री देवीमनुस्मर, नन्दनकूटवासिनीं मेघंकरादेवीमनुस्मर, मन्दरकूटवासिनीं मेघवतीदेवीमनुस्मर, निषधकूटवासिनीं सुमेघादेवीमनुस्मर, हैमवतकूटवासिनीं मेघमालिनीदेवीमनुस्मर, रजतकूटवासिनीं सुवत्सादेवीमनुस्मर, रुचककूट-

वासिनीं वत्समित्रादेवीमनुस्मर, सागर-चित्रकूटवासिनीं वैरसेनादेवीमनुस्मर, वज्रकूटवासिनीं बलाहकादेवीमनुस्मर। धन्यशालिभद्रमनुस्मर ॥

सभी जिनशासनदेवों का स्मरण करो, सभी जिनशासनदेवियों का स्मरण करो, बलकूट पर्वत निवासी बलदेव का स्मरण करो, गन्धमादन पर्वत निवासी गन्धमादन-देव का स्मरण करो, ब्राह्मी और सुन्दरी का स्मरण करो, श्री देवी का स्मरण करो, नन्दनकूट में रहनेवाली मेघंकरा देवी का स्मरण करो, नन्दनकूट में रहनेवाली वत्समित्रा देवी [illegible]

वासिनीं वत्समित्रादेवीमनुस्मर, सागर-चित्रकूटवासिनीं वैरसेनादेवीमनुस्मर, वज्रकूटवासिनीं बलाहकादेवीमनुस्मर। वन्यशालिभद्रमनुस्मर ॥

सभी जिनशासनदेवों का स्मरण करो, सभी जिनशासनदेवियों का स्मरण करो, बलकूट पर्वत निवासी बलदेव का स्मरण करो, [illegible] पर्वत निवासी [illegible] देव का स्मरण करो, सारी और सुन्दरी का स्मरण करो, श्रीदेवी का स्मरण करो [illegible] कूट के [illegible] निवासी [illegible] का स्मरण करो, [illegible] कूट के [illegible] निवासी [illegible]

का स्मरण करो, निषधकूट में रहनेवाली सुमेघा देवी का स्मरण करो, हैमवत कूट में रहनेवाली मेघमालिनी देवी का स्मरण करो, रजतकूट में रहनेवाली सुवत्सादेवी का स्मरण करो, रुचककूट में रहने वाली वत्समित्रादेवी का स्मरण करो, सागरचित्रकूट में रहनेवाली वैरसेनादेवी का स्मरण करो, वज्रकूट में रहनेवाली बलाहका देवी का स्मरण करो ! धन्यशालीभद्र का स्मरण करो ।

ॐ ह्रीं श्रीं लक्ष्मीदेवी आगच्छ २ ममगृहे मम निवासस्थाने धानधारां वर्षय २, सर्वं मनवांछितं पूरय २, क्षणामी क्षणौः मम सर्वं क्षणां सुखमयं कुरु कुरु ।

નહતુ હતુ કે ગમ તમ હાથ ...
ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
ી તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર
લી. સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

ॐ ह्रीं श्रीं लक्ष्मीदेवी। आओ, मेरे घर मे मेरे निवासस्थान मे धनधारा की वृष्टि करो मेरे सभी वाञ्छित को पूर्ण करो, प्रतिक्षण मेरे उपर कृपा दृष्टि रखो और मेरे सभी क्षण-समय को सुखमय करो।

पद्मा श्रीं मन्मथ क्लीं हृदय नम.

सुप्रतिष्ठे श्रेष्ठे वरिष्ठे शामे शामप्रभे महाप्रभे भासुरे भासुरप्रभे मम सर्वमनोरथ पूरय २। धनधान्यहिरण्यसुवर्ण-विविधरत्नवृष्टि कुरु कुरु।

पद्मा श्रीं मन्मथ क्लीं हृदय नम।

हे सुप्रतिष्ठे ! हे श्रेष्ठे ! हे वरिष्ठे ! हे गरिष्ठे हे शमे ! हे शमप्रभे ! हे महाप्रभे ! हे भासुरे ! मेरे सभी मनोरथों को पूर्ण करो, धन, धान्य, हिरण्य सुवर्ण और विविध रत्नों की वृष्टि करो।

ॐ ह्रीँ श्रीँ रूपे प्रसीद २। ॐ श्रीँ दिव्यानुभावे प्रसीद २। ॐ श्रीँ उज्जवले प्रसीद २, ॐ ह्रीँ श्रीँ उज्जवलरूपे प्रसीद २। ॐ श्रीँ ज्योतिर्मयि प्रसीद २। ॐ श्रीँ ज्योतिरूपधरे प्रसीद २ मम गृहं मम गृहस्य अंगणां नन्दन.

નધતુ હતુ કે ગમે તેમ હોય પણ ...
ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
ી તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર
કરી. સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

वन कुरु कुरु । ॐ अमृतकुम्भे प्रसीद
२ । ॐ अमृतकुम्भरूपे प्रसीद २ मम
वाञ्छित देहि २ । ॐ ऋद्धिदे प्रसीद २,
ॐ समृद्धिदे प्रसीद २, ॐ महालक्ष्मि
प्रसीद २, ॐ श्रीं लोकमात प्रसीद २,
ॐ श्रीं लोकजननि प्रसीद २, ॐ श्रीं
शोभावर्द्धिनि प्रसीद २, ॐ श्रीं अमृ-
तसञ्जीवनि प्रसीद २, ॐ श्रीं शान्तल-
हरि प्रसीद २. ॐ श्रीं प्रशान्तलहरि
प्रसीद २, ॐ श्रीं शातप्रशातलहरि

प्रसीद २। ॐ श्रीँ ग्लौँ श्रीँ नमः, ॐ ह्रीँ सर्वशत्रुदमनि सर्वशत्रुन् निवारय २ विघ्नं छिन्धि २ प्रसीद २ धरणेन्द्रपद्मा-वति मम सुखं कुरु २ प्रसीद २ ।

ॐ ह्रीँ श्रीँ (प्रशस्त रुपवाली) मेरे उपर प्रसन्न होओ। ॐ श्रीँ हे दिव्यानुभावे! दिव्यप्रभावशाली!) मेरे उपर प्रसन्न होओ। ॐ ह्रीँ श्रीँ हे उज्वले! प्रसन्न होओ ॐ ह्रीँ श्रीँ हे उज्जवलरुपे। प्रसन्न होओ ॐ ह्रीँ श्रीँ हे ज्योतिर्मय! प्रसन्न होओ। ॐ ह्रीँ श्रीँ हे ज्योति रुपधरे! प्रसन्न

તરતુ હતુ કે ગમે તેમ હોય પણ ...
ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
કી તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર
l. સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

होओ, मेरे घर को परे घर के आगन को नन्दननन करो। ॐ हे अमृत कुम्भे प्रसन्न होओ। ॐ हे अमृत कुम्भरुपे ! प्रसन्न होओ, मेरे सभी वान्छित पूर्ण करो, ॐ हे ऋद्धि दे। प्रसन्न होओ, ॐ हे समृद्धि दे ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ हे महालक्ष्मी ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ हे लोकमाता ! प्रसन्न होओ। ॐ श्रीँ हे लोकननिन ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ हे शोभावर्द्धिनि ! (शोभा बढ़ाने वाली) प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ हे अमृतसञ्जीवनि ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ हे शान्तलहरी ! प्रसन्न होओ, ॐ श्री प्रशान्तलहरी ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ शान्तप्रशान्तलहरी ! प्रसन्न होओ, ॐ श्रीँ

ग्लौँ श्रीँ आपको नमस्कार हो ॐ ह्रीँ हे सभी शत्रुओं का दमन करनेवालो ! सभी शत्रुओं का निवारण करो, विघ्न का छेदन करो, प्रसन्न होओ, हे धरणेन्द्र पद्मावती ! मुझे सुख दो, प्रसन्न होओ ।

मूलमंत्र- ॐ ह्रीँ श्रीँ असिआउ- साणं नमः ।

मूलमन्त्र- ॐ ह्रीँ श्रीँ असि अ उसा णंनमः

१. श्री अरिहन्त देव को नमस्कार हो ।

२. श्री सिद्धभगवान् को नमस्कार हो ।

३ श्री आचार्य को नमस्कार हो ।

ાઇતુ હતુ કે ગમે તેમ હોય પણ ...નાહાજલાલા તા

ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી

છી તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર

l. સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

८ श्री उपाध्याय को नमस्कार हो।

५ लोक में विराजमान सभी साधु-साध्वीयों को नमस्कार हो।

ॐ मंगलकरि प्रसीद, २, सुखकरि प्रसिद २ ॐ शान्तिकरि प्रसीद २ ॐ ऋद्धिसिद्धिकरि प्रसीद २,सुख देहि शांति देहि, ऋद्धिसिद्धि देहि, ॐ किलिकिलि एहिएहि आगच्छ आगच्छ सर्वसिद्धिदायिनि मम मनोवाञ्छित शीघ्रं पूरय पूरय।

ॐ हे मंगल करनेवाली! प्रसन्न होओ,

ॐ हे सुख करनेवाली ! प्रसन्न होओ, ॐ हे शान्ति करने वाली प्रसन्न होओ, ॐ हे ऋद्धि-सिद्धि करनेवाली ! प्रसन्न होओ, सुख दो शान्ति दो, ऋद्धिसिद्धि दो, ॐ किलिकिलि ! एहिएहि (आओ आओ) आगच्छ आगच्छ (आओ आओ) हे सभी सिद्धियों को देने-वाली । मेरे सभी मनोवाञ्छितों को शीघ्र पूर्ण करो ।

साध्यमंत्र— ॐ श्रीधारे प्रसीद प्रसीद । उपहृदयम्- ॐ त्रिलोकवासी-न्यै केवल लक्ष्म्यै नमः धन्यधान्य-

તેનું હતું કે ગમે તેમ હોય પણ ...હાજલાલા તા
ને કે આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
ની તેમનું ચારિત્રનેતા પર વાદ માટે ઢંઢણીસ દ્વારા જાહેર
. સૂતેલા સર્પને જગાડવો. સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

हिरण्य सुवर्णधारा ममनिवासे पातय२ ॐ श्री रत्नसिहासने प्रसीद २, ॐ कमलासने प्रसीद २। ॐ रत्नकुण्डले प्रसीद २, रत्नमुकुटे प्रसीद २। रत्न-भूषणे प्रसीद २। ॐ चारुच्छत्रचामरे प्रसीद २, ॐ सहस्त्रकिरणप्रद्योतकरि सर्वराजवशकरि सर्वप्रजावशकरि सर्वं लोकवशकरि सर्वं मम वश्य कुरु कुरु।

उपदेय- ॐ त्रिलोकगामिनी लक्ष्मीको

नमस्कार हो, धन्य धान्य हिरण्य सुवर्ण की धारा मेरे घर में वर्षाओ ! ॐ श्रीँ हे रत्न-सिंहासने ! (रत्नसिंहासनवाली) प्रसन्न होओ। ॐ हे कमलासने ! (कमल के आसनवाली !) प्रसन्न होओ। ॐ हे रत्नकुण्डल वाली ! प्रसन्न होओ। ॐ हे रत्नमुकुटवाली ! प्रसन्न होओ, ॐ हे रत्नों के भूपणवाली ! प्रसन्न होओ। ॐ हे चारु (सुन्दर) छत्र और चामरवाली ! प्रसन्न होओ। ॐ हे सहस्त्र किरणों से प्रकाश करनेवाली ! हे सभी राजाओं को वश करने वाली ! हे सभी प्रजाको वश करनेवाली ! हे सभी लोगों को वश करने वाली ! सभी को मेरे वशमें करो।

-

હતું હતુ કે ગમે તેમ હોય પણ જાહાજવાલા તા
ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
ા. તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર
લી. સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महामायः प्रसीदतु। इन्द्रः प्रसीदतु। सूर्यः प्रसीदतु। सोमः प्रसीदतु। यमः प्रसीदतु। वरुण. प्रसीदतु। वैश्रवण· प्रसीदतु। हरिगणमेघदेव. प्रसीदतु। त्रिजृम्भक. प्रसीदतु। गन्धापातिन्यामि न्यातिदेव प्रसीद २। चिकशपानिनामित्रमानदेव प्रसीद २ गयापानिरना,श्यमगृदेव प्रसीद २। म,नरदद्रिन्याधिपतिदेव प्रसीद २। सर्वदेशा-

भ्यः सर्वविदिशाभ्यः कल्पलतेव मम वांछितं पूरय २ ।

ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ महामाया प्रसन्न होओ ! इन्द्र प्रसन्न होओ ! सूर्य प्रसन्न होओ सोम प्रसन्न होओ ! यम प्रसन्न होओ ! वरुण प्रसन्न होओ ! वैश्रवण प्रसन्न होओ । हरिणै-गमेषि देव प्रसन्न होओ। त्रिजृम्भक देव प्रसन्न होओ शब्दापाति पर्वत के स्वामी हे स्वाति देव ! प्रसन्न होओ विकाटापाति पर्वत के स्वामी हे प्रभास देव प्रसन्न होओ । गन्धा-पाति पर्वत के स्वामि हे अरुण देव ! प्रसन्न होओ । माल्यवान् पर्वत के स्वामी हे पद्म-

ઘટતુ હતુ કે ગમે તેમ હોય પણ ...ગાહાળજવાળા તા
ને ? આવો ઉદાત્તવિચાર તેઓની શુષ્કભૂમિમાં ક્યાંથી
ગી તેમણે ચરિત્રનેતા પર વાદ માટે હેન્ડબીલ દ્વારા જાહેર
સુતેલા સર્પને જગાડવો, સિંહના મુખમાં હાથ નાંખવો

देहि २ दापय २ मह्यं हितकरं शांति-
करं कुलकरं वंशकरं वंशवृद्धिकरं।
महापद्महदनिवासिनि ह्री देवी मम-
लज्जां रक्ष २ महापुंडरीकद्र निवासि-
नि बुद्धिदेवि मम बुद्धि देहि २।
तिगिच्छहदनिवासिनि धृतिदेवि मम
धैर्यं कुरु २। केसरिहदनिवासिनि
कीर्तिदेवि मम यश किर्तिं प्रसारय २।

हे दयामयि! मेरे ऊपर दया करो २
जागो २ उठो २ सुखकर हिरण्य सुवर्ण दो,
मुझे हित कर, शान्तिकर, कुलकर, वंशकर

वशवृद्धिकर, हिरण्य सुवर्ण दिलाओ। महा-पद्महृद मे निवास करनेवाली हे ह्रीं देवी मेरी लज्जा रखो महापुण्डरीक हृद मे निवास करनेवाली हे बुद्धिदेवी! मुझे बुद्धि दो। ति-गिच्छहृद मे निवास करनेवाली हे धृतिदेवी! मुझे धैर्य दो। केसरी हृद मे निवासकरने-वाली हे किर्तिदेवी। मेरे यश और किर्ति को फैलाओ।

ॐ ह्रीं विश्वरूपिणि, विभूति-विभूतिरूपिणि, सृष्टि सृष्टिरूपिणि, धृति धृतिरूपिणि, किर्ति किर्तिरूपि-णि, सिद्धि सिद्धिरूपिणि, सर्वसुखसा-

म्राज्यदायिनि मम त्रिलोकसंपदं कुरु कुरु, हिरण्यसुवर्णैः सुखसिद्धिसौभाग्यैः श्रेष्ठैः सर्वोपकरणैः सर्वभोगैः सर्वोपभोगैश्च मम कोषकोष्ठागाराणि भर भर पूरय पूरय।

ॐ ह्रीं हे विश्वरूपिणि! हे विभूति! हे विभूतिरुपिणि! हे सृष्टि! हे सृष्टिरूपिणि! हे धृति! हे धृतिरूपिणि! हे किर्ति! हे किर्तिरूपिणि! हे सिद्धि! हे सिद्धिरूपिणि! हे सभी सुख और साम्राज्य को देनेवाली! मुझे तीनो लोकों की सम्पति दो, हिरण्यों से,

सुवर्णों से, सुखों से, सिद्धियों, सौभाग्यों से, श्रेष्ठ सभी सामग्रियों से सभी भोगों से और सभी उपभोगों से मेरे कोष और कोठारों को भरो, पूर्ण करो।

मूलविद्या—

ॐ नमिऊण असुरसुरगरुलभुयगपरि वंदिय गयकिलेसे अरिहा सिद्धायरिय उवज्झाय सव्वसाहुणो ॥

ॐ ह्रीं नमः धनदपुत्रि जगत्सवित्रि अष्टसिद्धिप्रधानमहानिधान सुवर्णकोटि रत्नकोटि शतसहस्रसपन्ने

आगच्छ २ भगवति मम गृहे मम पुरे प्रविश प्रविश मम अक्षीण सर्वधनं धारारूपेण वर्षय वर्षय ।

ॐ ह्रीं नमः हे धनदपुत्रि ! हे जगत्सवित्रि ! हे अष्टसिद्धिप्रधान महानिधानवाली ! लक्षलक्ष सुवर्णकोटि और रत्नकोटियों से युक्त ! आओ, २ हे भगवति ! मेरे घर में मेरे पुर में प्रवेश करो, मेरे लिये सभी प्रकार के अक्षीण धनों को धारारूप में बरसाओ ।

महाविद्या—

ॐ ह्रीं श्रीं श्रीधारे मम चिंति-

तसुखदायिनि अचिंतितसुखदायिनि प्रसीद २ मम सर्वं कार्यं माधय साधय।

महाविद्या—

ॐ ह्रीं श्रीं श्रीधारे मम चिंतित सुख दायिनि अचिंतित सुखदायिनि प्रसीद २ मम सर्वं कार्यं साधय साधय।

सर्वसुखनिधियन्त्र—

अ	अ	व	न
न	न	फ	फ
द	द	ध	ध

ॐ नमः श्रीधारे चिंतामणि महाविद्ये करुणाशरणे दीन भरणे जगदुद्धरणे विमलकमलवासिनि हिरण्य- सुवर्णधनधान्यकरि मम सकलार्थसिद्धिं प्रापय प्रापय, सर्वचिंतां चूरय चूरय, सर्वरिपुन स्तंभय २, निवारय २, जृंभय २, मोहय २, सुखदे शिवदे शान्तिदे शुभदे प्रमोददे मम सर्वसौभाग्यं ऋद्धिं सिद्धिं समृद्धिं वश्यं रक्षांच कुरु कुरु, मम जयं विजयं च कुरु कुरु ॥

परमहृदय—

ॐ नमस्कार हो, हे श्रीधारे ! हे चिन्ता मणि महानिधे ! हे दयनीय लोगोंके शरण रूप ! हे दीनो का भरण करनेवाली ! हे जगत के उद्धार करनेवाली ! हे विमलकमलके ऊपर वासकरनेवाली ! हे हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्य देनेवाली ! मेरे सभी अर्थों को सिद्ध करो, मेरी सभी चिन्ताओंको चूरो मेरे सभी शत्रुओं को स्तम्भ करो, निवारित करो, जृम्भित करो, मोहित करो, हे सुखदेनेवाली ! हे शिव-कल्याण-देनेवाली ! हे शान्तिदेने वली ! हे शुभ देनेवाली ! हे प्रमोद देनेवा-

ली ! मुझे सभी सौभाग्य दो, ऋद्धि दो, सिद्धि दो, समृद्धि दो, सभी को मेरे वश में करो, मेरी रक्षा करो, मेरी जय-विजय करो।

यह विद्या अचलमति विद्याधरने भद्रनंद नामक गाथापति को दी।

॥ इति श्रीधारामहाविद्यानामक संपत्स्मरण ॥४॥

५- अथ रिद्धिस्मरणम्

ऋद्धिस्मरणमात्रेण जायते ऋद्धिमान्नरः।
तस्माद् ऋद्धिं भगवतः प्रवक्ष्यामि
शुभावहाम् ॥१॥

५— ऋद्धिस्मरण

भगवानकी ऋद्धिके स्मरणमात्र से मनुष्य ऋद्धिमान होता है इसलिये भगवान की शुभदायक ऋद्धि को मैं कहता हूँ ॥१॥

ऋद्धेर्निरीक्षणं कर्तुं यस्याहारकलाब्धक: गच्छत्याहारकं कृत्वा तस्मै भगवते नम. ॥२॥

आहारकलब्धिवाले मुनि, भगवान की ऋद्धि को देखने के लिये आहारक लब्धिका स्फोरण करके उनके समीप जाते हैं ऐसे भगवान् को नमस्कार करता हूँ ॥२॥

अनन्तं केवलं ज्ञानं,
तथा केवलदर्शनम्।
अनन्त सौख्यमप्येवं,
सम्यक्त्वं क्षायिकं तथा ॥३॥
यथाख्यातं च चारित्र,
मवेदित्वमतीन्द्रियम्।
दानादिलब्धयः पंच,
द्वादशोक्ता गुणा इमे ॥४॥

—अरिहंत भगवान के बारहगुण—

(१) अनन्त केवल ज्ञान, (२) अनन्त केवल दर्शन, (३) अनन्त सौख्य, (४) क्षायिक

सम्यक्त्व, (५) यथाख्यातचारित्र (६) अवेदित्व, (७) अतिन्द्रियत्व और पाच दानादिलब्धि अर्थात (८) दानलब्धि, (९) लाभ लब्धि, (१०) भोगलब्धि, (११) उपभोगलब्धि' और (१२) वीर्यलब्धि, ये बारह गुण अरिहंतो मे होते हैं। ॥३-४॥

दिव्य लोकोत्तर रूप
दिव्यलावण्यसभृतम् ।
दिव्य ज्ञानादिकं यस्य
तस्मै भगवते नमः ॥५॥

जिनका दिव्य रूप है, जो दिव्य लाव-

ऋतुवश्च वसन्ताद्याः,

सर्वे प्रादुर्भवन्ति च ।

लोकाः प्रमुदिता यस्मात्,

तस्मै भगवते नमः ॥८॥

जिन भगवान् की अतिशय महिमा से बसन्त आदि सभी ऋतुएं एक साथ प्रकटित होती हैं और जिन से सभी लोगों को आनन्द होता है, ऐसे भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ ॥८॥

संवर्तकेन वातेन,

तत्र योजनमण्डलम् ।

सशोध्यते च परितः,
प्रासु पुष्पाम्बुवर्षणम् ॥९॥

रूप्यसालो दीप्यमानः
स्वर्णकङ्गुर-शोभितः ।
स्वर्णसालोऽपि रुचिरो,
रत्नकङ्गुर-शोभितः ॥१०॥

रत्नसालस्तृतीयश्च
भास्वरो मणिकङ्गुरः ।
इन्द्रास्तत्र चतुःषष्टि-
रायान्ति प्रभुसन्निधौ ॥११॥

अशोकपादपस्तत्र
सिंहासनवरस्तथा ।
दुन्दुभिश्चामरं छत्रं,
प्रादुर्भवति पुण्यतः ॥१२॥

भगवान जिनेन्द्र देवका जहां समवसरण होता है वहां पर व्यन्तरदेव, संवर्त्तक-वायु वैक्रिय करके चारों तरफ़ योजन मण्डल क्षेत्र को पहले-पहल वहां का कूड़ा-कचरा निकालकर साफ़ करते हैं, फिर वहां प्रासुक (अचित्त) पुष्प और अचित्त जल की वृष्टि करते हैं, सोने के कंगुरों से शोभित, जगमगाता हुआ पहला चान्दी का गढ़ बनाते हैं, रत्नों

के कगूरों से शोभित सोनेका दूसरा गढ बनाते हैं, और मणिमय कगूरों से सुशोभित, प्रकाश वान् तीसरा रत्नों का गढ बनाते हैं। वहा पर प्रभुके चरणों के समीप चौंसठ इन्द्र आते हैं। प्रभु के पुण्य से वहा पर अशोक वृक्ष श्रेष्ठ सिहासन, दुन्दुभि, चामर और छत्रत्रय प्रगट होते हैं॥ ६-१० ॥

भामण्डल प्रभोस्तत्र नेत्रानन्दकरं परम् ।
दिव्यध्वनिश्च सर्वेषां सुखदं जायते ततः॥

वहा पर नेत्रोंको आनन्द देनेवाला भामण्डल प्रगट होता है और दिव्यध्वनि होती है वह सभी जीवों के लिये सुखदायक होती

है। ये आठ महाप्रातिहार्य तीर्थंकरों के होते हैं ॥१३॥

स्वर्गशोभा च या स्वर्गे
यावती स्यात्ततोऽधिका ।
अनन्तगुणिता शोभा,
राजते तत्र मण्डले ॥१४॥

वहां कैसी शोभा होती है वह कहते हैं-

देवलोक में जितनी शोभा है उससे भी अनन्त गुणित अधिक शोभा भगवान् के समवसरण में होती है ॥१४॥

न्यूनान्यूनं कोटिसंख्या-

स्त सुरा. समुपासते।
द्वादशाना पर्पिदि
देशना दिशति प्रभुः ॥१५॥

कम से कम एक करोड देवता, प्रभुकी उपासना करते है, और प्रभु भवनपति, वानमन्तर, ज्योतिषी और वैमानिकदेव देविया, तथा मनुष्य मनुष्यणी तिर्यंच और तिर्यंचणी इस तरह बारह प्रकार की परिषद् मे धर्मदेशना देते है ॥१५॥

देवा मनुष्यास्तिर्यञ्चः
सर्वे शृण्वन्ति देशनाम् ।

तत्तद्वाक्परिणामिन्या
भाषया स च भाषते ॥१६॥

देव, मनुष्य, तिर्यंच ये सभी प्रभुकी देशना सुनते हैं और भगवान उन उन जीवों की अपनी २ भाषा में परिणत होनेवाली भाषा में देशना देते हैं ॥१६॥

यदि खण्डमयं क्षेत्रं
मधुवारि प्रवर्षणम् ।
क्षीरसारस्य पिण्डेन
पुरणं तत्र कर्षति ॥१७॥
तत्रापि यदि बीजं स्यात्

पुण्डकस्य निशामयम् ।
सेचनं तत्र सद्राक्षा
रसेन यदि तत्फलम् ॥१८॥
तद्रसादधिकानन्त
गुणा मिष्टा प्रभोर्गिरः ।
यस्य चोच्छ्वासनिःश्वासाः
पद्मोत्पलसुगन्धिकाः ॥१६॥

भगवानकी वाणी कैसी मीठी होती है? सो कहते हैं—

अगर खेत ईखका हो, उस में मधु (शहद) की वर्षा हो, और दाख के स्थान में

उसमें क्षीरसार (मक्खन) का पिण्ड डाला गया हो, फिर उस खेतको जोते। फिर उस खेत में पुंड्रक नामके गन्ने-सांठे के नीरोग बीज बोया जाय, और उसको उत्तम द्राक्षारस से सीचे फिर यदि उसमें फल लगे और वह फल जैसा मीठा हो उससे भी अनन्तगुणी अधिक भगवान् की वाणी मीठी होती है। और भगवान् के उच्छ्वास निःश्वास पद्म-कमल और उत्पलकमलके समान सुगन्धित होते हैं ॥१७-१८-१९॥

जिनेन्द्र चरणोपान्त्य ये
समायान्ति वादिनः।

संशयापगमाद् सर्वे
सुप्रसन्ना भवन्ति ते ॥२०॥

जिनेन्द्र भगवानके चरणों के समीप जो जो यात्री जाते हैं वे सभी अपने संशयके दूर हो जानेके कारण अत्यन्त प्रसन्न होते हैं ॥२०॥

एवं समवसरणं
जिनेन्द्रस्यातिशायिनः ।
उत्कृष्टशोभासंपन्नं
द्योतमानं च सर्वतः ॥२१॥

अतिशय प्रभाव संपन्न भगवान जिनेन्द्र

देवका समवसरण, इस प्रकार उत्कृष्ट शोभा से युक्त और चारों तरफ से प्रकाशमान होता है ॥२१॥

तत्र रत्नमयी भूमा
रत्नप्राकार गोपुरम् ।
रत्नपत्रैरत्नपुष्पै
र्वृक्षैरत्नफलैर्युतम् ॥२२॥

उस समवसरण की भूमि रत्नमयी होती है उसमें प्राकार (कोट) रत्नों का होता है, गोपुर (नगरद्वार) भी रत्नों का होता है, और वहां पर रत्नों के पत्रवाले रत्नों के पुष्पवाले और रत्नों के फलोंवाले वृक्ष होते हैं ॥२२॥

क्वचिद् वैडूर्यसंकाशं
क्वचिन्नीलमणिप्रभम् ।
स्फटिकाभं क्वचिज्जयोतिः
पद्मरागसमं क्वचित् ॥२३॥
क्वचित् काञ्चनसंकाशं
बालसूर्यसमं क्वचित् ।
क्वचिन्मध्याह्नसूर्याभं
विद्युत्कोटिसमंक्वचित् ॥२४॥

वहां की रत्नभूमि कहीं पर वैडूर्य मणि के समान चमकती है कहीं पर नीलमणि के समान, कहीं पर स्फटिक रत्न के समान,

कहीं पर ज्यौतिरत्न के समान, कहीं पर पद्म राग मणि के समान, कहीं पर सोने के समान कहीं पर बालसूर्य के समान, कहीं पह मध्या-ह्कालिक सूर्य के समान और कहीं पर करोड़ों विद्युतों के समान चलकती है ॥२३ २४॥

न सूर्यचन्द्रौ नो विद्युत्
कोट्योमणयोऽपिन ।
जिनप्रभायाः कोट्यंश-
कोट्यंशेनापि ते समाः ॥२५॥

जिनेश्वर की प्रभाके कोटि अंश के कोटि अंश (करोड़ वे अश के करोड़ वे अंश)

की भी तुलना न सूर्य कर सकते हैं, न चन्द्र-
मा कर सकते हैं, न करोडों विद्युत कर सकती
हैं, न मणियां ही कर सकती हैं ॥२५॥

लोकोत्तराऽऽर्हंती
ऋद्धिर्द्रव्यतो भावतस्तथा ।
मण्डलान्त.स्थवस्तूना
दिव्यदीप्तिविधायिनी ॥२६॥

तस्या विशुद्धभावेन
पाठेन विधिनाजनः ।
भवेत् स्वल्पेन कालेन
द्रव्यभावर्द्धिसंयुतः ॥२७॥

अर्हन्तों की लोकोत्तर द्रव्य और भाव ऋद्धि, मण्डल के अन्तर्गत वस्तुओंकी दिव्य दीप्ति को उत्पन्न करनेवाली होती है। जिनेन्द्र भगवान् की ऐसी लोकोत्तर ऋद्धिका विधि पूर्वक विशुद्ध भाव से पाठ करने से मनुष्य स्वल्पकाल में ही द्रव्य और भाव ऋद्धि से युक्त हो जाता है ॥२६-२७॥

॥ इति ऋद्धिस्मरण संपूर्ण ॥

卐 अथ षष्ठं सिद्धिस्मरणम् 卐

सिद्धीसरणमेत्तेणं,

सव्वसिद्धी पजायए।

तगेह सपयाच्छिस्स,

भव्वाण सिद्धिपयवे ॥१॥

६– अथ सिद्धस्मरण—

सिद्धस्मरण के स्मरण मात्र से सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है, इस लिये भव्यों की सिद्धि के निमित्त मैं सिद्धस्मरण करूँगा ॥१॥

विमलनयलमणोहर,

नमिऊणं चरण जिणवराणं।

वुच्छस्स तगुतगुत्ता,

सुरनिंदियं नविहियसहाए ॥२॥

विमल और सर्वापेक्षा मनोहरजो जिने-न्द्रों के चरणकमल हैं उन्हें नमस्कार करके, कवच के समान शरीर की रक्षा करनेवाला, सुख-सिद्धि देनेवाला इस कवच को मै भव्यजनों के हितार्थ कहूँगा ॥२॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ उसभोसिर मवउ
ॐ ऐँ क्रोँ वि अजिओभालं।
ॐ श्री संभवचोनेत्तं, पाउसया
सव्व सम्मदोय ॥३॥

ॐ ह्रीँ श्री श्री ऋषभस्वामी मेरे शिर की रक्षा करें, अर्थात् इनके प्रभाव से शिर की रक्षा हो। ऐसा सब जगह समझ लेना चाहिये।

ॐ ऐं क्रों श्रीं अजितनाथ स्वामी मेरे भाल (ललाट) की रक्षा करें।

ॐ श्रीं सभी प्रकार के कल्याण को देनेवाले श्री सम्भवनाथ स्वामी मेरे नेत्रों की सदा रक्षा करें ॥२॥

घाणिंदिय सव्वया,

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्री अभिनंदणो।

वःखत्र पाउ सुमइ ॐ,

कएणं ॐ क्लौं च पउमप्पहो ॥ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्री अभिनन्दन स्वामी मेरे घ्राणेन्द्रिय (नाक) की सर्वदा रक्षा करें।

ॐ श्री सुमतिनाथ स्वामी मेरे वक्षस्थल की रक्षा करें।

ॐ क्लौं श्री पद्मप्रभु स्वामी मेरे कर्णेन्द्रिय (कान) की रक्षा करें ॥४॥

कंठसंधिं तु रक्खउ,
ॐ ह्रीं श्रीं क्लों सुपास जिणवरो मे।
खंवं पुणपाउ मज्झक,
ॐ ह्रीं श्रीं जिणचंदप्पहो ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं जिनवर श्री पार्श्वनाथ स्वामी मेरी कण्ठसन्धि की रक्षा करें।

ॐ ह्रीं श्रीं जिनेश्वर चन्द्रप्रभ

स्वामी मेरे स्कन्ध (कन्धे) की सर्वदा रक्षा करे ॥५॥

ॐ क्रों सुविधिशुद्धि,
अवउ मिज्जंस वासुपुज्जो करज।
विमलजिणो उयर मे,
ॐ ह्रीं श्रीं वणालकलिओ ॥६॥

ॐ क्रों श्री सुविधिनाथ स्वामी मेरी बुद्धि की रक्षा करें।

ॐ क्रों श्री श्रेयांसनाथ स्वामी मेरे दाहिने हाथ की अंगुलियों की रक्षा करें।

ॐ क्रों श्री वासुपूज्य स्वामी मेरे बाँये हाथ की अंगुलियों की रक्षा करें।

ॐ ह्रीं श्रीं श्री विमल जिन मेरे उद्र (पेट) की रक्षा करें ॥६॥

ॐ ह्रीं धम्मो जंघं,
पिट्ठं मल्लि मल्लिकुसुमकोमलो।
सदयमुणिसुव्वयो हियं,
कुन्थू करेगीवं अरो श्रीं ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं धर्मनाथ स्वामी मेरी जंघाओं की रक्षा करें।

ॐ ह्रीं मल्लिका पुष्प के समान कोमल श्री मल्लीनाथ स्वामी मेरी पीठ की रक्षा करें।

ॐ श्रीं दयालु श्री मुनि सुव्रतनाथ स्वामी

मेरे हृदय की रक्षा करें।

ॐ श्रीँ श्री कुन्थुनाथ स्वामी मेरे हाथों की रक्षा करें।

ॐ श्रीँ श्री अरनाथ स्वामी मेरी ग्रीवा (गले) की रक्षा करें ॥७॥

ॐ श्रीँ श्रीँ नमी वक्ख,
नासारोग हरउ ह्रीँ श्रीँ नेमी।
अणतपासो गुज्जरोगं,
ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ सुकलियो ॥८॥

ॐ श्रीँ श्रीँ श्री नमीनाथ स्वामी मेरी नासिका की रक्षा करें।

ॐ ह्रीं श्रीं श्री नेमीनाथ स्वामी मेरे नासिका रोग का हरण करें।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्री अनन्तनाथ स्वामी और ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्री पार्श्वनाथ स्वामी मेरे गुह्यरोगों को हरें ॥८॥

ॐ श्रीं तिल्लोकवसं,

कुरु कुरु वद्धमाणो महावीरो।

सव्वमंगलसुहकरो,

चिंतामणि-सुरतरुव्व फलओ ॥९॥

ॐ श्रीं श्री वर्धमान महावीर स्वामी तीनोंलोकों को मेरे वशमें करें। जो भगवान्

सभी मङ्गल और सुख करने वाले, चिन्तामणि और कल्प वृक्ष के समान अभीष्ट फल दायक है ॥ ९ ॥

सव्वे जिणगणहरा,
अगरोमाइ मज्झक रक्खतु ।
ॐ ह्रीं श्रीं सियलपहु,
सव्वसत्तुच्चय सिढिल कुरु ॥१०॥

सब तीर्थंकरों के सब गणधर मेरे शरीर के रोमादि रक्षण करें और ॐ ह्रीं श्रीं श्री शीतलनाथ स्वामी मेरे सभी शत्रुओं को शिथिल करें ॥ १० ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ ह्रीँ,

संतीसुयसंपयं मज्झक कुणउ समिद्धिं

ॐ ह्रीँ ऐँ सीमंधर,

पमुहा होंतु कामधेणु व ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ ह्रीँ श्री शान्तिनाथ भगवान् मुझे सुत, सम्पत्ति और समृद्धि दें।

ॐ ह्रीँ ऐं श्री सीमन्धर आदिजिनेन्द्र कामधेनुके समान अभीष्ट फलदायक होवें ॥ ११ ॥

एवं सिद्धीसरणं,

जयहियकरणं सुहावहं सययं।

तम्हा अव्भसणिज्ज,

सव्वाण सव्वमुहवद सुवकर्द ॥१२॥

॥ इति सिद्धिस्मरणम् ॥

इस प्रकार का यह सिद्धिस्मरण, मनुष्यो का सर्वदा हित करनेवाला और सुख देनेवाला है, इसलिये सभी सुखोंके कन्द स्वरुप इस स्मरण का अभ्यास सभी को करना चाहिये ॥१२॥

॥ इति सिद्धिस्मरण सपूर्ण ॥

—अथ सप्तम जयस्मरणम्—

जयस्मरणमात्रेण जयः सर्वत्र जायते ।

तदहं संप्रवक्ष्यामि,

भव्यानां जयहेतवे ॥१॥

जयस्मरण मात्र से सर्वत्र जय होता है, इसलिये मैं भव्यों के हितार्थ जयस्मरण कहूंगा ॥१॥

ॐ घंटाकर्णो महावीरः

सर्व व्याधिविनाशकः।

सर्वविघ्नापहर्ता च,

सर्वत्र जयकारकः ॥ २ ॥

ॐ श्री घण्टाकर्ण महावीर, सभी व्याधियों के विनाशक हैं, सभी विघ्नों को दूर करने वाले हैं, सर्वत्र जयकारक है ॥२॥

यत्र त्व वर्तसे देव !,
लिखितोऽक्षरपङ्क्तिभिः ।
तत्राधयो व्याधयश्च,
नैवतिष्ठन्ति सर्वदा ॥ ३ ॥

हे देव ! जहां पर आप अक्षर पङ्क्तियोंसे लिखित रहते हैं, वहां पर आधि और व्याधिकी स्थिति कभी भी नहीं होती ॥३॥

उपायश्च सर्वेऽपि,
शोकश्चिन्ता दरिद्रता ।
उपसर्गा ग्रहाश्चैव,
प्रशाम्यन्ति न संशय. ॥४॥

सभी प्रकारकी उपाधियां, सभी प्रकारके शोक, चिन्ता, दरिद्रता, उपसर्ग और ग्रह प्रशान्त हो जाते हैं, इसमें किसी भी प्रकार का संशय नहीं है ॥४॥

डाकिनी शाकिनी चैव,
योगिनी राक्षसा अपि ।
भूताः प्रेताश्च वेतालः
पलायन्ते न संशयः ॥५॥

डाकिनी, शाकिनी, योगिनी, राक्षस, भूत, प्रेत और वेताल, इस जयस्मरण से दूर भाग जाते है, इसमें कुछ भी संशय नहीं ॥५॥

घण्टाकर्णप्रभावेण,

कामधेनुः सुरद्रुमः ।

चिन्तामणि र्निधिश्चैते,

भवन्ति वशवर्तिनः ॥ ६ ॥

घण्टाकर्ण महावीर के प्रभाव से कामधेनु कल्पवृक्ष, चिन्तामणि, और निधि, ये सभी वशवर्ती हो जाते हैं ॥६॥

नाकाले मरणं तस्य,

न च सर्पेण दश्यते ।

अग्निचौर भयनास्ति,

ह्रीँ घण्टाकर्ण नमोस्तुते,

ठः ठः ठः स्वाहा ॥ ७ ॥

इस जयस्मरण के स्वाध्याय करनेवालेका अकाल मरण नही होता है, न उसे सर्प डस सकते हैं, न उसको कभी कोई चोर और अग्नि का भय होता है। ह्रीँ घण्टाकर्ण ! आपको नमस्कार हो, ठ. ठ ठः स्वाहा ॥७॥

॥ ईति जयस्मरण संपूर्ण ॥

–॥ ८ अथ विजयस्मरणम् ॥–

(ज्वर आवे, मस्तिष्क पर भार मालूम पड़ता हो तो किसी से सुनना अथवा स्वयपाठ करना)

विजयस्मरणानिच्च,

सव्वत्थ विजयो भवे ।

तमह सपवोच्छिस्स,

सव्वलोगोवकारग ॥ १ ॥

विजयस्मरण से नित्य सर्वत्र विजय होती है सभी लोगोका उपकारक उस विनयस्मरणको मैं कहूं गा ॥१॥

उवसग्गहर पास,

पास वन्दामि कम्मघण मुक्क ।

धरणिंदपोमावइ,

सहिय कल्लाणआवास ॥ २ ॥

पार्श्वयक्ष जिनकी आज्ञाके पालन के लिये सर्वदा तत्पर रहना है, धरणेन्द्र पद्मावती जिनकी सेवाके लिये सतत उत्सुक रहते हैं, ऐसे उपसर्गहारी, कर्मघन से मुक्त, कल्याण के आवास भगवान् श्री पार्श्वनाथ स्वामीको वन्दन करता हूं ।।२।।

ॐ ह्रीँ श्रीँ तं नमामि पासनाहं ।।३।।

ॐ ह्रीँ श्रीँ उन पार्श्वनाथको नमस्कार करता हूं ।।३।।

ॐ ह्रीँ श्रीँ धरणिंद

नमंसियं दुहविणासं । ४।।

ॐ ह्रीँ श्रीँ धरणेन्द्र नमस्कृत दुःख-विनाशक प्रभु को नमस्कार करता हूं ॥४॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ जस्सप्पभावेण सेया ॥५॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ जिनके प्रभाव से कल्याण होते हैं ॥५॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ नासति उवद्दवा सव्वे ॥६॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ सभी उपद्रव नष्ट हो जाते हैं ॥६॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ पइसुमरामि त मणे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं उनको मनमें स्मरण करता हूँ ॥७॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ न होइ वाही न किंपि दुहं ॥८॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ न कोई व्याधि होती है और न कोई दुःखी होता है। ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ न होइ जल जलण भयं तह सप्पसिंह भयं ॥९॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ न जलका भय होता है, न अग्नि का भय होता है न सर्प का भय होता है और न सिंहका भय होता है ॥९॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ न होइ चोरग्सिभव

भय ॥१०॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ चोर और शत्रु से होने वाला भय नहीं होता है ॥१०॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ पयड न इत्थ सदेहो

॥११।

ॐ ह्रीँ श्रीँ पार्श्वनाथ प्रभु का यह पूर्वोक्त प्रभाव प्रकट है, यहा कोई सन्देह नही है ॥११॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ नामवि जस्स हु

मंतसमं ॥१२॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ नाम भी जिनका मन्त्रके समान है ॥१२॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ जो सुमरइ पासना-
हपहुँ ॥१३॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ जो पार्श्वनाथ प्रभुका स्मरण करता है ॥१३॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ पहवइ
न कयावि कोवि तस्स ॥१४॥

ॐ ह्रीँ श्रीँ क्लीँ कभी भी कोई भी उसके ऊपर प्रभुत्व नही कर पाता ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं श्रीं
सव्वसुहं पावइ इह लोगट्ठी परलोगट्ठी
॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं इहलोकार्थी और परलोकार्थी अपने २ अभिलषित सभी प्रकार के सुखों को प्राप्त करते हैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्रीं जो सरइ पासनाहं
सोमुच्चइ सव्व दुःखाओ ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं जो पार्श्वनाथ प्रभुको स्मरण करते हैं वे सभी प्रकार के दुःखों से मुक्त हो जाते हैं ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रुं ह्रौं गाँ गीं गः
तह सिज्झइ खिप्पं ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रूं ह्रौं गाँ गीं गः शीघ्र सकल कार्य सिद्ध होते हैं ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्रीं इयनाउ सरेह भग-
वंतं ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं ह्रूं ह्रौं गाँ गीं गः ऐसा समझकर भगवान का स्मरण करना चाहिये ।१८॥

ॐ ह्रीं श्रीं सवसत्ति संपन्न धरणिंद पोमावइ देवि सव्वत्थविजयं

कुरु कुरु सव्वकित्तिजसोबल, देहि देहि सव्व सौभग्ग कुरु कुरु सव्वमगल साधय साधय सव्व मनोरथ पूरय पूरय ॐ ह्रीं श्रीं नम सिद्ध ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्रीं हे सर्वशक्ति सम्पन्न वर रोन्द्र और पद्मावती देवी। सर्वत्र विजय करो, सभी प्रकार की कीर्ति यश और बल मुझे दो, सभी प्रकार का सौभाग्य दो, सभी प्रकार के मगलको सिद्ध करो, मेरे सभी मनोरथोंको पूर्ण करो, ॐ ह्रीं श्रीं नम सिद्ध ॥१६॥

॥ इति विजयस्मरण सपूर्ण ॥८॥

—❀ ६ शान्तिस्मरण ❀—

शान्तिस्मरण मात्रेण
शान्तिः सर्वत्र जायते ।
तदहं संप्रवक्ष्यामि
सर्व कल्याण कारकम् । १॥

६ अथ शान्तिस्मरण ॥

शान्तिस्मरण मात्र से सर्वत्र शान्ति होती है। इसलिये मैं सर्वकल्याण कारक उस शान्ति स्मरण को कहूंगा ॥१।

शान्तिनाथं प्रभुं वन्दे
मातृगर्भ गतोऽपि यः ।

मारीभये समुत्पन्ने,

लोकाना शातिकारकः ॥२॥

मैं शान्तिनाथ प्रभु की वन्दना करता हू, अपनी माताके गर्भ मे रहे हुए भी जो मरकीका भय उत्पन्न होने पर लोगो के लिये शातिकारक हुए ॥२॥

यस्मिन् जाते च लोकेषु,

प्रकाशः समजायत ।

शान्तिः सर्वत्र लोकानां

मंगलं च गृहे गृहे ॥३॥

जिनके उत्पन्न होने पर तीनोलोकमे प्रकाश होगया, सर्वत्र लोगो को शाति हुई और

घर घर में मंगल हुआ। ॥३॥

विश्वसेनो नृपश्चासीत्,

सुन्दरे हस्तिनापुरे।

अचिराख्या महादेवी

सुव्रता शीलशालिनी ॥४॥

अति सुन्दर हस्तिनापुर नगर में विश्वसेन नामक राजा थे, उनकी रानीका नाम अचिरा देवी था, जो परम पतिव्रता थी और शीलसे सुशोभित थी ॥४॥

तस्या गर्भे समायातः

शान्तिनाथ जिनः प्रभुः।

त्रिलोकवन्द्यः सर्वेषां

शोकसन्तापहारकः ॥५॥

उस रानी के गर्भ मे, त्रिलोकवन्द्य, सभी के शोक सन्ताप हरने वाले, प्रभु शान्तिनाथ जिन अवतरित हुए ॥५॥

तदा कूटसनिवेशे,

हस्तिनापुरसन्निधौ ।

शान्तिप्राप्ता जनाः सर्वे

सङ्कटे समुपस्थिते ॥६॥

उस समय हस्तिनापुर के पास कूटनामक सन्निवेशमे, उपस्थित बहुत सङ्कट से सभी लोगों को शान्ति मिली ॥६॥

कश्चिदद्देव स्तदातत्र,
पूर्ववैर मनुस्मरन् ।
स्वकीयशक्त्या पाषाण
वर्षणं कृतवान् परम् ॥७॥

उस समय उस कूट सन्निवेशमें कोई देवने, अपने पूर्व भवके वैरका स्मरण करते हुए अपनी वैक्रिय शक्ति से उस गाम पर अत्यधिक पत्थरों की वृष्टि की ॥७॥

प्रचण्ड पवन स्तत्र,
प्रादुर्भूतोभयंकरः ।
दावानल समश्चाग्नि,
रुद्भूताः सर्प वृश्चिकाः ॥८॥

फिर वहा पर प्रचण्ड पवन वहने लगी दावा-नल की सदृश भयङ्कर आग चारो तरफ लगने लगी, और जहरीले सर्प और वृश्चिक (बिछू) उत्पन्न हुए ॥८॥

वज्रपातसमोनादः,
सर्वजन्तुभयानकः ।
नद्या.पूरःप्रादुरासीद्
विषधूमस्तथैव च ॥६॥

सभी प्राणियो को भय देने वाला वज्रपातस-दृश गर्जन होने लगा, नदियो मे प्रचण्ड बाढ आने लगी, और विष का धूम फैलने लगा ॥६॥

विद्युत्पातस्तथा व्याधि

रुपाधिश्च सहस्रशः।

भूकम्पस्तमसाच्छन्नं,

नभः पक्षिरुतैर्युतम् ॥१०॥

हज़ारों विद्युपात, व्याधि उपाधि और भूकम्प वहां होने लगे, आकाश अन्धकार से व्याप्त हो गया और उड़ते पक्षिगण भयार्त्त शब्द करने लगे ॥१०॥

शिलावृष्ट्याहताः केचित्,

केचिद् वायुरयाऽऽहताः।

पतन्ति, व्याकुलाः केचित्,

शुष्ककण्ठाः पिपासवः ।११।

कितनेक शिलावृष्टि से आहत होकर गिरते थे, कितनेक वायु के प्रचण्ड वेग से आहत होकर गिरते थे, कितनेक प्यास के मारे शुष्ककण्ठ हो व्याकुल होकर गिरते थे ॥११॥

समन्ताज्जवलतिग्रामे

हाहाकार युता नराः ।

शब्दाघातेनबधिराः,

दृष्टाः सर्पादिभिस्तथा ॥१२॥

वे कूटसन्निवेश चारों तरफ़ से जलने लगा, उनके निवासी लोग हाहाकार करने लगे, कित-नेक लोग वज्र जैसे शब्दों के आघातसे बधिर-

हो गये थे और कितनेक लोगों को सर्पो ने डस लिया था ॥१२॥

नद्याः पूरं समायान्तं,
दृष्ट्वा धावन्ति सर्वतः ।
विषधूमाद्दृष्टिहीना
विद्युत्पातहता अपि ॥१३॥

नदी के बाढ को आते देख, मनुष्य चारों ओर भागते थे, विषधूम से कितनेक मनुष्य दृष्टीहीन (अन्धे) हो गये थे, कितनेक बिजली गिरने से मूर्छित हो गये थे ॥१३॥

पतन्ति यत्रतत्रापि,
झंझावातहता गृहः

भूकम्पचलिताश्चैव,

जनाउद्विग्नमानसाः ॥१४॥

झंझावात(आंधी) से कितनेक घर जहाँ तहाँ गिर गये थे, कितनेक घर भूकम्प से 'अब गिरे अब गिरे' ऐसे होगये थे, सभी मनुष्यो का चित उद्विग्न हो गया था ॥१४॥

तम प्रच्छन्नदेहाश्च

न पश्यन्ति परस्परम्।

सजाता भयभीताश्च

जना.कल्पान्तशङ्कया। १५॥

अन्धकार इतना बढ गया कि लोग एक

दूसरे को परस्पर नहीं देख पाते थे। सभी मनुष्य कल्पान्त (प्रलय) की आशङ्का से भय-भीत हो गये थे। ॥१५॥

कश्चिदेको जनस्तत्र,
भीत्याऽऽयातो नृपान्तिके।
उवाच करुणासिन्धो!
त्रायस्व शरणागतम् ॥१६॥

उस कूट सन्निवेशका भयभीत कोई एक मनुष्य, राजा के समीप आया, और बोला हे करुणासिन्धु! शरणागतकी रक्षा करो ऐसा कह कर सब वृत्तांत सुनाया ॥१६॥

देशवार्त्ताहरास्तत्र
तदैव समुपागताः ।
ऊचुर्नृपान्तिके सर्वे
देशविप्लवदुर्दशाम् ॥१७॥

सर्वत्र च महामारी
महादुष्टा पिशाचिनी ।
निपात्य दुःखगर्ते च
जनान् भक्षति सर्वतः ॥१८॥

उसी समय देशवार्त्ताहर (राज्यकी परि-
स्थिति का समाचार लानेवाले दूत) भी वहां

आये, और उन लोगों ने भी, देशमे जो विप्लव और दुर्दशा का साम्राज्य छाया हुआ था उसका यथार्थ वर्णन किया। फिर उन दूतोंने महाराजा से कहा हे महाराज! देश में सर्वत्र महा-दुष्टा महामारी पिशाचिनी लोगों को दुःख के गर्त्त (खड्डे) में डाल कर चारों तरफ से खा रही है, अतः इसका प्रतीकार आवश्यक है।।१७-१८।।

एतन्निशम्य वचनं
भूपति र्जनवत्सलः।
विश्वसेनः कृपासिन्धुः
प्रतिज्ञा मकरोत्तदा ।।१९।।

सर्वथा नैव शान्तिः स्याद्
यावत्काले प्रजासु च ।
चतुर्विधाशनं त्याज्यं
तावत्काले मया ध्रुवम् ॥२०॥

दूतों का यह वचन सुनकर प्रजावत्सल, करुणा के सागर राजा विश्वसेन ने यह प्रतिज्ञा की कि जब तक प्रजा में सर्वथा शान्ति नहीं होगी तब तक के लिये मैं चारों प्रकार के आहार का परित्याग करता हूं ॥१९-२०॥

आगतस्तत्र देवेन्द्र
स्तदैव चलितासनः ।

उवाच नृपतिं राजन् !
कष्टं किं तव विद्यते ॥२१॥

राजा की इस प्रतिज्ञा से देवेन्द्र का आसन चलित हो गया और वे राजा के समीप आये और कहने लगे - हे राजन ! आपको क्या कष्ट है जो आपने चारों प्रकार के आहार का परित्याग किया ? ॥२१॥

विश्वसेन नृपः सर्वं
देवेन्द्रं वृत्त मब्रवीत् ।
दुखःवार्ता समाकर्ण्य,
सुरेन्द्रः प्राह भूपतिम् ।२२।

वृथा किं खिद्यते राजन् !

सन्निधि र्यस्य सन्निधौ ।

चिन्तामणि सुरतरु.

कामधेनुश्च वर्तते ॥२३॥

सर्वशक्तियुतो देव.

सर्वं शान्तिकर. प्रभु ।

जनन्या उदरे राजन् !

वर्तते भवने तव ॥२४॥

[illegible] राजमुकुट [illegible] रानी ने [illegible] सुनाया। तब राजा पुरन्दर [illegible] ने [illegible]

इस प्रकार कहा:—

हे राजन् जिसके पास चिन्तामणि, कल्पवृक्ष और कामधेनु है, ऐसे आप व्यर्थ ही क्यों खिन्न होते हैं ? क्यों कि हे राजन्। आपके भवन के अन्दर अचिरा रानी के कुक्षि में सर्वशक्ति सम्पन्न, सभी को शान्ति देनेवाले प्रभु विराज रहे है ॥२२-२३-२४॥

इत्युक्त्वा तत्र देवेन्द्रो
मातृगर्भं गतं जिनम्।
भावेन स्तोतुमारेभे,
सर्वं शान्ति प्रकाम्यया ॥२५॥

इस प्रकार राजा को आश्वासन देकर देवेन्द्र ने सभी लोगों में शान्ति हो, इस कामना से मातृ-गर्भ स्थित जिन भगवान की मान-पूर्वक स्तुति प्रारम्भ की ॥२५॥

कर्पूर शीतल-लोके,
तस्मादपि च चन्दनम् ।
ततश्चाप्यधिकश्चन्द्र
स्तस्मादप्यधिको भवान् ॥२६॥

लोकोत्तमो लोकनाथो,
लोक प्रद्योत कारकः ।
चतुर्दश मार्गदश्चापि

धर्मदः शुद्धबोधिदः ।२७॥

अवधि ज्ञान संपन्नो

भव्यांब्जोद्बोध भास्करः ।

जनानन्दकरः सर्व-

शुद्ध धर्म प्रकाशकः ।२८॥

चन्द्रमाश्रयते हर्तुं मा-

काशः स्वगतं तमः ।

तथा दुःखतमो हर्तुं

प्रभो ! त्वा माश्रये ध्रुवम् ॥२६॥

सर्वसिद्धिप्रदः सर्व-

सिद्धौषधि समः प्रभुः ।

स्मृतमात्रो भवान्नत्र
सर्वथा शान्तिकारकः ॥२०॥
अज्ञानतिमिरध्वस—
भानुमन्न करुणार्णव।
आल्हादने शरच्चन्द्र!
साऽन्द्रशान्तिकरोभव ॥२१॥

(देवेन्द्र ने जो स्तुति की वह इस प्रकार है) लोक मे कपूर शीतल है, उससे भी शीतल चन्दन है, चन्दन की अपेक्षा अधिक शीतल चन्द्र है, और चन्द्र से भी शीतल आप है। हे भगवन्! आप लोकोत्तम (लोक में सर्व श्रेष्ठ) है, लोकनाथ हैं, लोक को प्रकाशित करनेवाले

हैं, ज्ञान चक्षु देनेवालेहै, मार्ग देनेवाले हैं, धर्म देनेवाले हैं, और शुद्ध बोधि देनेवाले हैं। हे भगवन्! आप अवधिज्ञान से युक्त हैं, भव्यरूपी कमलों को विकसित करने में आप भास्कर हैं, सभी मनुष्यों को आनन्द देनेवाले हैं, सर्वविशुद्ध धर्म के प्रकाशक हैं, हे प्रभो! जैसे स्वगत अन्धकार को दूर करने के लिये आकाश चन्द्रमा का आश्रयण करता है उसी प्रकार दुःखरूपी अन्धकार को दूर करनेके लिये हम आपका आश्रयण करते हैं। हे भगवन्! आप सभी सिद्धियों के दाता है, आप समस्त सिद्धौषधि के समान हैं, आप तीनों लोक के प्रभु हैं, हे भगवन्! आप स्मरणमात्र से इस

ससार मे लोगो के लिये सभी प्रकारसे शान्ति-कारक है। हे भगवन्! आप अज्ञानरूपी अन्धकार के नाश करने मे सूर्यरूप है आप करुणा के समुद्र है, आप प्रजाओंको आल्हादित करने मे शरच्चन्द्ररूप है, ऐसे आप हे भगवन्! लोक मे पूर्ण शान्तिकारक होवें ॥२६-२७-२८-२९-३०-३१॥

एवं स्तुत्वा जिन शक्र
स्तन्मातर मवोचत ।
स्मरणात्मकमिदं स्तोत्र
ब्रूहिमात. स्वयं शुभम् ॥३२॥

इस पदश्लोकी प्रकार जिनेन्द्र भगवान् की

स्तुति करके देवेन्द्रने जिनेन्द्र की माता अचिरा देवी से कहा-हे माता ! इस स्मरण रूप स्तोत्र को आप स्वयं पढें ॥३२॥

इन्द्रस्य वचना द्देवी
प्रासाद मभिरुह्य सा ।
स्तोत्रं पठति भावेन
विलोक्य परित स्तदा ॥३३॥
सकृत्पठन मात्रेण,
शान्तिर्जाता च सर्वथा ।
सर्वत्र सर्वलोकेषु,
ऋद्धिः सिद्धिश्च संपदः ॥३४॥

इन्द्र का वचन सुनकर अचिरा देवी ने, राज भवन के उपर चढकर चारों तरफ देख कर, भावपूर्वक इस स्तोत्र को पढा। इस स्तोत्र के मात्र एकबार पढने से आधि, व्याधि, उपाधि मिट कर सर्वत्र पूर्ण शान्ति हो गयी, सभी लोग ऋद्धि, सिद्धि और सम्पत्ति से युक्त हो गये ॥३३-३४॥

यदा पुन जिनेन्द्रस्य
जन्मकालः समागत॰ ।
तदा समस्तलोके च
स्वयं शान्ति रुपागता ॥३५॥

फिर जब भगवान जिनेन्द्र का जन्मकाल

आया, उस समय सकल जगत में स्वयमेव शान्ति छा गयी ॥३५॥

प्रसन्नाश्च जना: सर्वे
मङ्गलं च गृहे गृहे ।
जाते शान्तिकरे शान्ति-
नामके षोडशे जिने ॥३६॥

शान्ति करने वाले शान्तिनामक सोलहवें जिनेन्द्र के जन्म लेने पर तो सभी मनुष्य प्रसन्न हो गये, घर घर में मंगल छा गया ॥३६॥

शांति स्मरण पाठेन
सर्वत्र शुभ भावत: ।

ऋद्धि: सिद्धि: सुख

सप ऽज्जायते सर्व मङ्गलम् ॥२७॥

शुभ भावना से इस शान्ति स्मरण का पाठ करने से मनुष्य को सर्वत्र ऋद्धि, सिद्धि सुख, सम्पत्ति और सभी प्रकार के मङ्गल प्राप्त होते है ॥२७॥

॥ इति शान्तिस्मरण सपूर्ण ॥

॥ इति अद्भुत नवस्मरण सपूर्ण ॥





प्रात स्मरणीय

श्री गौतम-रास

दोहा

गुण गाऊं गौतम तणा, लब्धि तणा भंडार। वडा शिष्य भगवन्तना, जाणे जग संसार ॥१॥ प्रतिबोध्या प्रभुजी कने, गणधर गौतम स्वाम ॥ संजम पाली सिद्ध हुआ, जारो नित प्रत लीजे नाम ॥ २ ॥

नम्बर पहला

तीरथनाथ त्रिभुवन धणी, प्रभु शासण ना सिरदार ॥ भक्ति करी भगवन्तनी, जाणे मन वाञ्छित दातारजी ॥ सुमरो पण सुख थेमरजी उठे करते जेजकारजी॥ प्रभु पहुँचा तुरत

मुंजारजी, प्रभु थाप्या तीरथ चारजी ॥ चारों संग मांहे सिरदारजी, गौतम नामा गणधारजी ॥ जांने होज्यो मारो नमस्कारजी, दिहाडा बिच-वार हजारजी ॥ १ ॥

॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥

॥ टेर ॥ सोलमा सोना सारखाजी, सुन्दर रूप शरीर ॥ कंचन कसोटी चढाविया, भगवती में भाख्यो श्री महावीरजी ॥

जांने दीठा हर्षन्त हीरजी, स्वामी सायर जेम गम्भीरजी ॥ उपशम खम दम में धीरजी, जांरी वांणी मीठी खांड खीरजी, मीठो खीर समुद्र नो नीरजी ॥ स्वामी छकाया ना पीरजी, वीरजी रे हुआ वजीरजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥ २ ॥ गोरा ने वर्ण फूटराजी कंचन

कोमल गात ।। देही जारी दीपू दीपू करे ।। देवता पण कौतक वानजी, रोग रहित काया सार हाथजी ।। घणा रह्या गुरा रे साथजी, सेवा कीन्ही दिन ने रातजी ।। प्रश्न पुछे जोड़ी दोनों हाथजी, जारी कहुँ कठा लग वातजी ।। जारे वीरजी दीनो माथे हाथजी, हुआ तीन गुनरा नाथजी ।। श्री गौतम स्वामी मे गुण घणा ।।३।। प्रथम सघयण सठाण सु जी, गुण घणा भरपूर।। घोर ब्रह्मचर्य माहि वस रह्या है तपस्वी मोटा सूरजी ।। कायर कथी जावे दूरजी, दीपे तपस्या मे अति पूरजी ।। आठो कर्म किदा चकचूरजी, जाने वन्दना उगन्ते सूरजी ।। जारो चोखो घणो छे नूरजी, जारो भजन किया दुख दूरजी ।। श्री गौतम स्वामी मे गुण घणा ।। ४ । अभिग्रह

कीन्हों आकरोजी, विस्तार भगवती रे मांय ॥
चार ज्ञान चवदे पूर्ण धणी, तेजु लेस्यां छे पिंड मांयजी ॥ दपटी राखी छे काया मांयजी, दीनो ध्यान सुचित लगायजी ॥ उकड्ड वैठा शीश नमायजी, जांरी करणी में कमियन कांयजी ॥ जांरो भजन किया सुख थायजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥ ५ ॥ पुछा ज्यां कीन्ही वणीजी आणी मन आणन्द ॥ श्रद्धा में संशय नहीं उपनो, उपनो केवल उच्छरंगजी ॥ वांद्या श्रीवीर जिणन्दजी, पहुँच्या देश प्रदेशना स्कन्धजी ॥ अणंत ज्ञानी त्रिशलादे के नन्दजी, सूत्र मेलदिया सरो संदजी ॥ सेवे जांने सुरनर-वृंदजी, सोहे तारा विच में चन्दजी ॥ श्री गौतम स्वामी

मे गुण घणा ॥ ६ ॥ सूत्र भगवती मे पूछिया-
जी, प्रश्न अनेक प्रकारजी ॥ अग उपाग मे
पूछियाजी, पूछ्या वारम्वारजी ॥ तीर्थनाथ कियो
निस्तारजी, गौतमजी ने तारणहारजी प्रभु ज्ञान
तणा भडारजी ॥ ज्यारी बुद्धि रो कोई नहीं
पारजी, घणा जीवा पे कियो उपकारजी ॥ ज्या
पुरुषारी जाउ बलिहारीजी ॥ श्री गौतम स्वामी
मे गुण घणा ॥७॥ एक दिन गोतम मन चिन्त-
वेजी, मने क्यों न उपजे केवल ज्ञान ॥ खेद
पाम्या प्रभु देखने, बोलाया श्रीवर्द्ध मानजी, गौतम
सनमुख उभा आणजी, वीर आदर दियो सन-
मानजी ॥ मन वाछित दीनो दानजी, गौतम गुण
रत्ना की खानजी ॥ चित निर्मल राख्यो ध्यान
जी, तज्यो मोह मत्सर अभिमानजी ॥ छ त्याया

ने दीयो अभयदानजी, धन धन श्री गौतम स्वाम जी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥८॥ थारे ने मारे गोयमा रे घणा काल की प्रीत ॥ आगे ही आपां भेला रह्या, वली लोड वडाई नी रीत जी ॥ मोह कर्म को लीजो थे जीतजी, केवल आडी याहीज भींतजी ॥ थे तो शिष्य बडा सुविनीतजी, थे तो राखज्यो रुडी रीतजी ॥ थे तो पालजो पूरी प्रीतजी, मत राखजो वासी सीथ जी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥ ९ ॥ वीर वचन इम सांभलीजी कीन्हों कर्म सुजंग ॥ करणी कीधी निरमली, श्री वीर तणा सुविनीत जी ॥ हुआ ब्राह्मण केरा पूतजी, छोड़ी न्यानीला सु प्रीतजी ॥ ज्यांरे वीर वचन आया चित्तजी ॥ तज दीनी खोटी रीतजी, ज्यांरे आई सांची

मीतजी ॥ जोडी जुगत मुगत सु प्रीतजी, तपसी मोटा ना कडा भूतजी ॥ प्रभु गया जमारो जीत जी, धर्म ध्यानी जीतारा मीतजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥१०॥ ज्ञान दर्शन चारित्र भर्याजी, पाले निर अतिचार ॥ बेले बेले पारणा प्रभु जीत्या राग ने रीसजी ॥ ज्यारी करणी निमल नीसजी, जारे भजन किया निसदीसजी ॥ ज्यारी पूर मन जगीसजी, ज्याने हुँ नमाउ म्हारो शीशजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥११॥ इण भव आगे आवरे, आपा दोनु बराबर होय ॥ अजर अमर सुख सासता ॥ जठे जनम मरण नही होयजी ॥ भूख तृषा न लागे कोयजी, गुरु मोटा मिलिया मोतजी ॥ म्हारे कमी न राखी कोयजी वीर रे मामा रया छे जोयजी,

ज्याने दीठा हर्षित होयजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥ १२ ॥ सनमुख वीर बखाणियाजी, गौतम ने तिणवार ॥ म्हांरे थांरा सरीखा बीजा थोड़ा, पाखण्ड्यारा जीतण हारजी ॥ चरचा वाद में तुरत तैयारजी ॥ हेतु जुगत अनेक प्रकारजी, सहु साधु थांरे लारजी ॥ सांभल हर्षित थाय अपारजी ॥ श्री गौतम स्वामी में गुण घणा ॥१३॥ कार्तिक वदी अमावस्याजी मुगत गया महावीर ॥ गौतम स्वामी ने ऊपनो निर्मल केवल ज्ञानजी, धर्म दिपायो नगर पुर ठामजी ॥ सासता सुख पाया अभिरामजी, वार वार करुं गुण ग्रामजी ॥ स्वामि पहुँच्या शिवपुर स्थानजी, धनधन श्रीगौतम स्वामजी ॥ श्री गौतम

स्वामी मे गुण घणा ॥१४। ससार समुद्र जाण ने जी, मोह कर्म कियो दूर ॥ अनित्य भावना भावने, पाया केवल दर्शन सारजी ॥ गौतम नामा गणधारजी ॥ आप तया घणा जीवा ने तारजी थाने वन्दना वारवारजी ॥ जारो नाम लियां निस्तारजी ॥ जपता होवे खेवा पारजी ॥ श्री गौतम स्वामी मे गुण घणा ॥१५॥ पूज्य जयमलजी परसाद से जी, कीनो ज्ञान अभ्यास सम्वत अठारे चालीसमे, सुन्दर भाद्रव मासजी, गौतमजी रो कीन्हो रासजी ॥ सुणज्यो चित हुलासजी, जिसमे पावो लील विलासजी । श्री बीकानेर चौमासजी ॥ मक साधु चार पासजी रिष रायचन्दजी किनो परकाशजी । श्री गौतम स्वामी मे गुण घणा ॥१६॥

दशवैं कालिक सूत्र

अध्ययन १ पहला

नमो सिद्धाणं॥ धंमो मंगल मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो। देवा वितं नमं संति। जस्स धंमे सया मणो॥१॥ जहा दुमस्स पुप्फेसु। भमरो आवियइ रसं॥ न य पुप्फं किलामेइ। सोय पीणेइ अप्पयं॥२॥ एमेए समणा मुत्ता। जे लोए संति साहुणो॥ विहंगमाव पुप्फेसु दाण भत्ते सणे रया।३॥ वयं च वित्तिं लब्भामो। नय कोइ उवह-

म्मइ ॥ अहागडेसु रीयन्ते । पुप्फेसु भमरा जहा ॥४॥ महुगार सम्मा बुद्धा । जे भवन्ति अणिस्सिया ॥ नाणा पिंड रया दन्ता । तेण वुच्चन्ति साहुणो ॥ त्तिबेमि ॥५॥

इति दुम पुप्फिया नाम पढम अज्झयण समत्त ॥

—अध्ययन २ दूसरा—

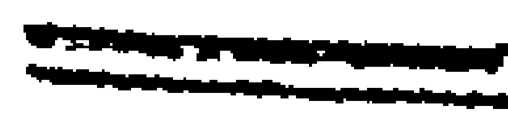
कह नुकुज्जा सामण्णं । जो कामे न निवारए ॥ पए पए विसीयन्तो सकप्पस्स वस गओ ॥१॥ वत्थ गन्ध मलंकार । इत्थीओ सयणाणिय ॥ अच्छन्दा जेन

भुंजन्ति। न से चाइति वुच्चइ ॥२॥
जेय कन्त पिए भोए। लद्धे वि पिट्ठी
कुव्वई ॥ साहिणे चयइ भोए। सेहु
चाई ति वुच्चइ ॥३॥ समाइ पेहा इ
परिवियन्तो। सिया मणो निस्सरइ
बहिद्धा ॥ न सा महं नो वि अहं पि
तीसे। इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं
॥४॥ आया वयाहि चय सोग मल्लं।
कामे कमाहि कमियं खु दुक्खं ॥
छिन्दाहि दोसं विणएज्ज रागं। एवं
सुही हो हिसि सम्पराए ॥५॥ पक्खन्दे

जलिय जोइ । धूम केऊ दूरासय ॥ नेच्छन्ति वन्तय भोत्त । कुले जाया अगधणे ॥६॥ धिरत्थु तेऽजसो कामी जो त जीविय कारणा ॥ वन्त इच्छसि आवेउ । सेय ते मरण भवे ॥७॥ अहं च भोग रायस्स । त च सि अन्ध ग वण्हिणो । मा कुले गन्धणा होमो । सजमं निहुओ चर ॥८॥ जइ तं काहिसि भावं । जा जा दिच्छसी नारीओ ॥ वाया विद्धुव्वहडो । अट्ठि

अप्पा भविस्ससि ॥९॥ तीसेस वयणं सोच्चा। संजयाइ सुभासियं ॥ अंकुसेण जहानागो। धम्मे सम्पडि वाइयो ॥१०॥ एवं करन्ति सम्बुद्धा। पण्डिया पविपक्खणा। निणियट्टुरि भोगे सु जाहा से पुरिसुत्तमो ॥ त्तिबेमि ॥११॥

॥ इति सामण्ण पुव्वय नाम बिईयं अज्झयणं समत्तं ॥



श्री वीर स्तुति

॥ पुच्छिसुण समणा माहणाय ॥ आगारिणो
या परतित्थियाय ॥ से केइ णेगन्त हिय धम्म
माहु ॥ अणेलि स साहू समिक्खयाए ॥१॥ कहच
नाण कह दसण से ॥ सील कह नाय सुयस्स
आसी जाणासिण भिक्खु जहातहेण ॥ अहा
सुय बूहि जहाणि सत ॥२॥ खेयन्न ए से कुसले
महेसी ॥ अणत नाणीय अणन्त दसी ॥ जस-
सिणो चक्खुपहे ठियस्स ॥ जाणाहि धम्म चधि
इच पेहि ॥३॥ उडढ अहेय तिरिय दिसासु ॥
तसा य जे थावर जे य पाणा ॥ सेणिच्च णि-
च्चेहि समिक्ख पन्ने ॥ दीवे व धम्म समिय
उदाहु ॥४॥ से सव दसी अभिभूय नाणी ॥ नि
राम गधेधिइम ठियप्पा ॥ अणुतरे सव्व जगसि

विज्जं ॥ गंथा अतीवे अभए अणाऊ ॥५॥ से भूइ पन्ने अणिए अचारी ॥ ओ हंतरे धीरे अणन्त चक्खु ॥ अणुत्तरं त्तप्पइ सूरिए वा ॥ वइरोयणिन्देव तमं पगासे ॥६॥ अणुत्तरं धम्म मिणं जिणाणं ॥ णेया मुनी का सव आसुपन्ने इ देव देवाण महाणुभावे ॥ सहस्सणेया दिवियणं विसिट्ठे ॥७॥ से पन्नया अक्खय साग रे वा ॥ महोदही यावि अणन्त पारे ॥ अणाइ लेया अकसाइ भिक्खू ॥ सक्केव देवाहि वई जु- इमं ॥८॥ से वीरिएणंपडि पुण्णवीरिए ॥ सुदंस- णे वा णग सव्व सेट्ठे ॥ सुरालए वासी मुदा गरे से ॥ वीरायए से णेग गुणोव वेए ॥ ९॥ सयं सहस्साण उजोयणाण ॥ तिकण्ड गे पण्डग

वेजयन्त ॥ से जोयणे नव नव ते सहस्से उड्ढुस्सिओ हेट्ठ सहस्समेग ॥१०॥ पुट्ठे नभे चिट्ठइ भूमि वट्ठिए ॥ ज सूरिय अणुपरिवट्टयन्ति ॥ से हेमवन्ने बहु नन्दणेय ॥ जंसि रतिं वेदयती महिन्दा ॥११॥ से पव्वए सद्दमहप्पगासे ॥ विरायती कंचणमट्ठवन्ने ॥ अणुत्तरे गिरिसु य पव्व दुग्गे ॥ गिरिवर से जलिए व भोमे ॥१२॥ महीइ मज्झम्मि ठिए णगिन्दे ॥ पण्णायए सूरिय सुद्ध लेसे ॥ एव सिरीए उस भूरिवण्णे ॥ मणोरमे जोयइ अच्चिमाली ॥१३॥ सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स ॥ पवुच्चई महतो पव्वयस्स ॥ एतोवमे समणे नायपुत्ते ॥ जाइ

जसो दंसण नाणसीले ॥१४॥ गिरिवरे रा नि
सहाययाणं ॥ रुप एवं सेट्ठे वल पाय ताणं ॥
तओ व में से जग भूइ पन्ने ॥ मुणीण माझ्
तं उदाहु पन्ने ॥१५॥ अणुतरं धम्ममुई रइता ॥
अणुतरं झाणवरं झियाइ ॥ सु सुक्क सुक्कं
अपगंड सुक्कं ॥ संखि दुणान्त वदात सुक्कं
॥१६॥ अणुतरगं परमं महेसी ॥ असोस कम्मं
स विसोह इत्ता ॥ सिद्धि गते साइमणन्त पते ॥
नाणेण सीलेणय दंसणेण ॥१७॥ रुक्खेसु नाए
जह सामलीवा । जस्सि रति वेदयति सुवन्ना ॥
वणेसु वा नन्दण माहुसेट्ठं ॥ नाणेण सीलेण
य भूइ पन्ने ॥१८॥ थणिय व सद्दाण अणु-

तरेउ ॥ चन्दो व ताराण महाणुभावे ॥ गॅवे सुरा चन्दन माहु सेट्ठ ॥ एव मुणीण अपडिन्न माहु ॥१८॥ जहासयचूउदहीण सेट्ठे ॥ नागे सुरा धरणिन्द माहु सेट्ठे ॥ खो ओदए वारस वेजयन्ते ॥ तवो यहाणे मुणी वेजयन्ते ॥२०॥ हत्थी सु एरावण माहुणाए ॥ सिहोमियाण सलिलाण गगा ॥ पक्खी सु वा गुरु ल वणु देवे ॥ निव्वाण वादीणि हनायपुते ॥२१॥ जोहे सुणाए जह वीससेणे ॥ पुप्फेसु वा जह अरविन्द माहु ॥ खत्तीण सेट्ठे जह दन्त वक्के ॥ इसीण सेट्ठे तहवद्धमाणे ॥२२॥ दाणाण सेट्ठ अभयप्पयाण ॥ सच्चेसुवा अणवज्ज वयन्ति ॥ तवेसुवा उत्तम बम्भचेर ॥ लोगुत्तमे समणे

नायपुत्ते ॥२३॥ ठिईण सेट्ठा लव सत्तमा वा ॥ सभा सुहम्मा व सभाण सेट्ठा ॥ निव्वाण सेट्ठा जह सव्वधम्मा ॥ ण नायपुत्ता परमत्थि नाणी ॥२४॥ पुढोव मे धुणाई विगय गेहि ॥ न सन्नि हि कुव्वइ आसुपन्ने ॥ तरिउं समुद्दं व महा-भवोघं ॥ अभयं करे वीर अणन्त चक्खू ॥२५॥ कोहंच माणं तहेव मायं ॥ लोभंचउत्थं अज्झत्थ दोसा ॥ एयाणिवन्ता अरहा महेसी ॥ णकुव्वइ पावन कारवेइ ॥२६॥ किरिया किरियं वेण इ याणुवायं ॥ अन्नाणियाणं पडिअच्च ठाणं ॥ से सव्व वायं इति वेयइत्ता ॥ उवट्ठिए संजम दीहरायं ॥२७॥ से वारिया इत्थी स राइभत्तं ॥ उवहाणव दुक्ख खयट्ठयाए । लोगं विदित्ता

आर परच ॥ सव्व पभूवारिय सव्ववार ।२८॥ सोच्चाय धम्म अरहन्त भासिय ॥ समाहिय अट्ठपदो व सुद्ध ॥ त सद्दहाणायजणा अणाऊ ॥ इन्दा व देवाहि व आगमिस्सन्ति ॥२६॥ इति श्री वीर स्तुति सम्पूर्ण ॥

\+ \+ \+

ॐ नमो अरिहताण, भजरे मन वार वार
ॐ नमो श्री सिद्धाण, भजरे मन वार वार
ॐ नमो आयरियाण, भजरे मन वार वार
ॐ नमो उवज्झायाण, भजर मन वार वार
ॐ नमो सव्व साहूण भजरे मन वार वार

—: मंगल पाठ :—

अरिहन्त जय जय, सिद्ध प्रभु जय जय
साधू जीवन जय जय, जैन धर्म जय जय,
अरिहन्त मंगलं, सिद्ध प्रभु मंगलं,
साधू जीवन मंगलं, जैन धर्म मंगलं,
अरिहंत उत्तमा, सिद्ध प्रभु उत्तमा
साधु जीवन उत्तमा, जैन धर्म उत्तमा,
अरिहंत शरणं, सिद्ध प्रभु शरणं
साधु जीवन शरणं जैन धर्म शरणं

—: ॐ :—

